chapter 5

अध्याय : ५

"हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में
मनोवैज्ञानिक समस्याओं का निरूपण।"

५:०१:०० **प्रास्ताविक :**

उपन्यास कथा साहित्य की विधा है । किन्तु मात्र कथा कहना उसका उदेश्य कभी नहीं रहा है । वस्तुतः मानवजीवन के साथ उपन्यास के गहरे सरोकार हैं । मनुष्य का जीवन अनेकानेक समस्याओं से जुड़ा हुआ है । संसार में एसा कोई मनुष्य नहीं मिलेगा, जिस के जीवन में कोई समस्या न होगी । कैसा भी सुखी, संपन्न, समृद्ध व्यक्ति क्यों न हो, उसके जीवन में कोई-न-कोई समस्या रहती ही है । मानव-जीवन के कई आयाम होते हैं - जैसे कि पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक इत्यादि । अतः मानव-जीवन

से सम्बन्धित समस्याएँ भी नाना स्वरुपों में मिलती हैं । ये समस्याएँ सामाजिक भी हो सकती हैं, पारिवारिक भी हो सकती हैं, आर्थिक भी हो सकती हैं, राजनीतिक भी हो सकती हैं और व्यावसायिक भी हो सकती हैं । सामान्यतया समाजिक उपन्यासो में सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, प्रभृति समस्याएँ उपलब्ध होती हैं । राजनीतिक उपन्यासो में राजनीतिक समस्याओं को उकेरा जाता है । व्यंग्यात्मक उपन्यासो में समाज, राजनीति, धर्म, शिक्षा इत्यादि क्षेत्रों की विसंगतियों और विद्रूपताओं से उत्पन्न समस्याओं को चित्रित किया जाता है । ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में मनोवैज्ञानिक समस्याओं को निरुपित करने का उपक्रम लेखक का रहता है ।

जिस प्रकार सामाजिक उपन्यासो में लेखक का ध्यान सामाजिक-पारिवारिक समस्याओं पर केन्द्रित रहता है; ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में लेखक का लक्ष्य मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अनुसंधान और विश्लेषण की ओर रहता है । यहाँ एक बात ध्यातव्य है कि मानवजीवन से जुड़ी हुई ये नाना प्रकार की समस्याएँ भी कहीं-न-कहीं परस्पर जुड़ी हुई या गुँथी हुई होती है । उदाहरणतया कोई सामाजिक समस्या नितांत सामाजिक नहीं होती है । वह मनोवैज्ञानिक या सांस्कृतिक प्रकार की समस्याओं से जुड़ी हुई हो सकती है । ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक समस्या भी समाज, धर्म, राजनीति, नीतिशास्त्र आदि से सम्बद्ध हो सकती है । कई बार आर्थिक समस्याओं का उत्स हमें मनोवैज्ञानिक समस्याओं में मिलता है ।

ऐसा नहीं है कि सामाजिक उपन्यासो में मनोवैज्ञानिक समस्याएँ नहीं होतीं, या मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में सामाजिक या आर्थिक समस्याएँ नहीं होतीं । वस्तुतः ये समस्याएँ तो मानवसमाज से जुड़ी हुई होती है । फर्क फक्त इतना है कि सामाजिक उपन्यासों का लेखक मनोवैज्ञानिक समस्याओं की

पड़ताल में पड़ता नहीं है । अन्यथा मनोवैज्ञानिक समस्याएँ वहाँ भी होती ही हैं । मुंशी प्रेमजंद के उपन्यास 'गोदान' में होरी का पुत्र गोबर जुनिया नामक ग्वालिन के साथ भाग जाता है । यहाँ पर सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक समस्याएँ तो हैं । दोनें की जातियों में समाजगत अंतर है । अतः गाँव में रहते हुए उनका विवाह नहीं हो सकता । यह एक सामाजिक समस्या का परिणाम है । किन्तु यदि कोई मनोवैज्ञानिक या मनोचिकित्सक गोबर के अंतर्मन का परिक्षण करें तो उसे अन्य मनोवैज्ञानिक कारण भी मिल जाएँगे । होरी का व्यक्तित्व बहुत दबा हुआ है । गाँव के महाजन, सेठ-साहुकार, सरकारी अमले, राय साहब, आदि सभी लोगों से होरी दबता है । वह हर बात में 'मरजादा' का ध्यान रखता है । उसे हमेशा यह भय खाये जाता है कि लोग क्या कहेंगे ? वह एक दब्बू किस्म का इन्सान है । होरी की इस प्रकृति के कारण घर में जो आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न होती है उन्हें धनिया और गोबर को भी झेलना पडता है । फलतः गोबर के मनमें अपने पिता के प्रति एक विद्रोह का भाव निरंतर विकसित होता जाता है । और जुनिया के साथ वह भाग जाता है उसमें उसके अचेतन मन का विस्फोट भी कारणभूत होता है । इस प्रकार प्रकटतः समस्या सामाजिक प्रकार की दिखती है, किन्तु उसके मूलमें भीतर कहीं मनोवैज्ञानिक समस्या भी प्रच्छन्न रुप में पड़ी हुई है ।

डॉ. जवाहर सिंह कृत 'आदमी और जानवर' नामक उपन्यास का नायक धनपाल जब अपने गाँव जाता है तो स्टेशन से घर का रास्ता अधिक दूर न होते हुए भी टाँगे में सवार होकर जाता है । यहाँ प्रकटतः उसकी आर्थिक स्थिति में जो सुधार हुआ है उसका यह परिणाम दिखता है । किन्तु उसकी यह समस्या आर्थिक नहीं, अपितु मनोवैज्ञानिक अधिक लगती है । वह आर्थिक तथा जातिगत हीनताबोध से ग्रसित है । इस हीनताबोध के कारण ही उसके भीतर की वृत्तियाँ उछाल मारती हैं । टाँगा लेकर जाने में गाँव के लोगों

के आगे अपना सिक्का गालिब करने की प्रवृत्ति तो है ही। किन्तु प्रश्न यह होता है कि वह ऐसा क्यों करता है ? वस्तुतः उसका शैशव जीवन अनेक प्रकार की जिल्लतों और किल्लतों से गुजरा है। निम्न जाति का होने के कारण गाँव के सवर्ण लोगो की ओर से उसे कई-कई प्रकार के अपमानों से गुजरना पड़ा था। जब वह टाँगा लेकर गाँव में जाता है, तो वस्तुतः वह इन लोगों को दिखा देना चाहता है। अतः कह सकते हैं कि इस 'दिखा देने की भावना' से प्रेरित होकर ही वह ऐसा करता है।

यही बात जगदीशचन्द्र कृत उपन्यास 'धरती धन न अपना' के नायक काली पर भी लागू होती है। काली किशोर अवस्था पूर्व गाँव से भागकर शहर चला गया था। शहर में एक लम्बे अरसे तक वह रहता है और एक अच्छी खासी रकम कमाकर वह अपने गाँव घोड़ेवाहा लौट आता है। काली का यह प्रत्यागमन उसके अन्तर्मन की मनोवैज्ञानिक समस्याओं का परिणाम है। काली के स्थान पर अगर कोई दूसरा व्यक्ति होता तो वह शहर में ही बस जाता। गाँव के लोग जो शहर जाते हैं, फिर वहीं के होकर रह जाते हैं। किन्तु काली वापिस लौट आता है। उसका कारण भी यही है। वह गाँव के चौधरियों को दिखा देना चाहता है। उन चौधरियों को जिन्होंने बचपन में कई बार काली को मारा-पीटा है, उसकी चमार जाति को लेकर उसे माँ-बहन की गालियाँ दी है। उस समय वह छोटा बच्चा था। किन्तु अपमान की इस तिक्तता को वह भूला नहीं है। उसका ऊपरी मन कहता है, चेतन मन कहता है कि अपने लोगों का लगाव और प्रेम उसे खींच लाया है; किन्तु ऐसा नहीं है उसके (Libido) 'लिबिडो' में शैशव-जीवन की जो अनेकानेक कटु स्मृतियाँ है; वस्तुतः यही कटु स्मृतियाँ उसे गाँव की ओर खींच ले जाती हैं। काली में यदी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ न होतीं, वह यदि एक साधारण, स्वस्थ युवक होता, वह तो ओर भी अमीर और धनवान हो सकता था। उसमें बुद्धि प्रतिभा है। कमाने की वृत्ति

भी है । वह उन कमाये हुए रुपयों से ओर भी अधिक रुपये कमा सकता था । गाँव आकर भी वह पहला काम पक्का मकान बनाने का करता है । यह मकान क्या है ? वस्तुतः 'पक्का मकान' काली के लिए 'स्टेटस सिम्बोल' बन चुका है । अन्य चमारों के मकान घास-फुस और मिट्टी के हैं । केवल चौधरियों एवं महाजनों के मकान पक्के हैं । काली इन चौधरियों और महाजनों को दिखा देना चाहता है कि चमार होते हुए भी वह उनकी तरह ही पक्का मकान बनवा सकता है । इस प्रकार ऊपरी दृष्टि से देखने पर काली की समस्या हमें आर्थिक प्रतीत होती है । किन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टया विचार करने पर ज्ञापित होगा कि उसकी यह समस्या आर्थिक नहीं, किन्तु मनोवैज्ञानिक अधिक है ।

फणीश्वर नाथ 'रेणु' कृत 'जूलुस' उपन्यास का तालेवर गोड़ी निम्न जाति का एक नव-धनिक (Neo capitalist) व्यक्ति है । तंत्र-विद्या के नाम पर वह गाँव की सवर्ण युवतियों को फाँसता है और उनसे यौन-सबंध स्थापित करता है । ऊपरी तौर पर देखा जाए तो हम उसे एस 'सेक्स मेन्याक' व्यक्ति कह सकते हैं । किन्तु यहाँ प्रश्न यह होता है कि वह अपनी यौन संप्तृप्ति के लिए सवर्ण युवतियाँ को ही क्यों फाँसता है ? यदि तालेवर गोड़ी की मनोवैज्ञानिक समस्या का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करें तो हमें ज्ञापित होगा कि निम्न जाति का होने के कारण उसने अपनी शैशव तथा किशोर अवस्था में देखा था कि उच्च वर्ण के धनिक लोग किस प्रकार निम्न जाति के लोगों की बहन-बेटियों को अपनी वासना का शिकार बनाते थे । वस्तुतः उसके भीतर का यह 'हलाहल' ही उससे यह सब करवाता है ।

५:०२:०० मनोवैज्ञानिक समस्याएँ :

जिस प्रकार सामाजिक उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं का निरुपण रहता है, वहाँ ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में मनोवैज्ञानिक

समस्याओं का निरुपण रहता है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में प्राप्त होनेवाली इन समस्याओं को हम निम्नलिखित कोटियों में वर्गीकृत कर सकते है :

(क) वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में ।

(ख) पारिवारिक जीवन के संदर्भ में ।

(ग) सामाजिक जीवन के संदर्भ में ।

(घ) आर्थिक जीवन के संदर्भ में ।

(च) सांस्कृतिक मान्यताओं के संदर्भ में ।

(छ) यौन समस्याएँ ।

५:०२:०१ वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में :

उपन्यास को परिभाषित करते हुए डॉ. एस. एन. गणेशन ने लिखा था - ''उपन्यास मनुष्य के सामाजिक, वैयक्तिक अथवा दोनों प्रकार के जीवन का रोचक साहित्यिक रुप है, जो प्रायः एक कथासूत्र के आधार पर निर्मित होता है ।''[१]

इस परीभाषा में असंदिग्ध रुपसे यह ज्ञापित किया गया है कि उपन्यास में सामाजिक या वैयक्तिक जीवन का आकलन होता है । यह भी पहले अनेकशः निर्दिष्ट किया जा चुका है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में लेखक का ध्यान सामाजिक की अपेक्षा वैयक्तिक समस्याओं की ओर अधिक केन्द्रित रहता है ।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक होगा कि समस्याओं का स्वरुप पूर्णतया मनोवैज्ञानिक होता है, किन्तु ये मनोवैज्ञानिक समस्याएँ प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग-अलग प्रकार की होती हैं । मनोवैज्ञानिक समस्याएँ भी व्यक्ति-दर-व्यक्ति परिवर्तित होती रहती हैं । एक ही व्यक्ति के संदर्भ में दो व्यक्तियों

के अभिमत कई बार भिन्न-भिन्न प्रकार के और भिन्न भिन्न दिशाओं की ओर जानेवाले हो सकते हैं। मोहन राकेश कृत उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरें' में नीलिमा और शुक्ला जो दो सगी बहनें हैं, उनकी हरबंस के प्रति की धारणा भिन्न-भिन्न प्रकार की है। जहाँ नीलिमा हरबंस के व्यवहार से असंतुष्ट है, अनेक मामलों में हरबंस के प्रति उसकी धारणा अच्छी नहीं है। वहाँ शुक्ला में हरबंस के प्रति श्रद्धा, भक्ति की सीमा तक पायी जाती है। ऐसा इसलिए होता है कि दोनों की वैयक्तिक समस्याएँ अलग-अलग प्रकार की हैं। नीलिमा वैयक्तिक चरित्र (individual character) की कोटि में आती है। उसमें रचनात्मक प्रतिभा है। उसकी अपनी एक पहचान है। अतः उसकी प्रकृति 'सबमीसिव' नहीं है। वहाँ दो प्रतिभाओं की टकराहट है। हरबंस का पुरुषोचित अहम् यह तो चाहता है कि अपने सर्कल में आधुनिका पत्नी होने के नाते उसका सम्मान हो। किन्तु एक सीमा तक ही। जहाँ नीलिमा की प्रतिभा हरबंस की प्रतिभा को आक्रान्त करने लगती है, वहाँ नीलिमा के प्रति उसका व्यवहार असहयोगात्मक हो जाता है। नीलिमा का नृत्य प्रदर्शन असफल रहता है। उसके पीछे हरबंस की उदासीनता ही कारणभूत है। नीलिमा यदि एक सामान्य-सी, घरेलू टाईप स्त्री होती, तो ऐसा नहीं होता। दूसरी तरफ नीलिमा की बहन शुक्ला की प्रकृति 'सबमीसिव' है। वह एक साधारण टाईप की, घरेलू प्रकार की, अपने घर-परिवार और बच्चों में संतुष्ट रहनेवाली महिला है। हरबंस का पुरुषोचित मानस शुक्ला की इस 'सबमीसिवनेश' को पसन्द करता है, इतना ही नहीं शुक्ला के ऐसे स्वभाव के कारण वह उसकी ओर झुकता भी है और यदि हरबंस का बस चलता हो वह उसकी शादी भी नहीं होने देता। किन्तु हरबंस की विदेशयात्रा के दौरान शुक्ला हरबंस के ही एक मित्र सुरजीत से विवाह कर लेती है। शुक्ला अपने जीजाजी हरबंस को हर लिहाज से एक आदर्श पुरुष समझती है। वह हरबंस को पापाजी कहती है। हरबन्स के प्रति उसके मन में एक प्रकार का बद्धत्व-भाव है। शुक्ला उन तमाम

व्यक्तियों के प्रति सम्मान का भाव रखती है, जो हरबंस के मित्र हैं और हरबंस जिनकी प्रशंसा करता है । इस प्रकार हम देख सकते हैं हरबंस और नीलिमा के जीवन में जो मनोवैज्ञानिक समस्या पैदा होती है उनका उत्स (मूल) उनकी अपनी-अपनी मनोवैज्ञानिक वैयक्तिक विशेषताओं में है । नीलिमा एक वैयक्तिक स्वतंत्र चरित्र है । आधुनिक सोच विचार से युक्त है । दूसरी ओर हरबंस में आधुनिकता के प्रति व्यामोह तो है परन्तु उसका पुरुष-मानस-संस्कारित अचेतन मन पुराने विचारों से सर्वथा मुक्त नहीं है । वह अपने 'पुरुष को' नीलिमा के स्त्रीत्व पर स्थापित करना चाहता है । हरबंस का आधुनिकपन अधकचरा-सा है । एक तरफ अपने आधुनिक मित्रों, तबकों और काफी हाउसो में बुद्धिजीवियों की वाहवाही लुटने के लिए वह नीलिमा जैसी मोडर्न युवती को चाहने का और विवाह करने का दंभ भरता है, और अपनी उस 'मोर्ड़न' पत्नी को 'अल्ट्रा मोर्डन' बनाने की भरसक कोशिशे भी करता है, किन्तु दूसरी तरफ उसका सहस्त्राधिक वर्षों से चली आ रही पुरुष-शासित समाज व्यवस्था से उत्प्रेरित मन यह भी चाहता है कि उसकी वह 'अल्ट्रा मोर्डन' पत्नी उसके इशारों की डोरी पर कठपुतली की तरह नाचती रहे । गुजराती में एक कहावत है - ''हसवुं अने लोट फाकवो ए बन्ने साथे न बने ।'' अर्थात् हँसना और आटा फांकना ये दोनों क्रियाएँ साथ साथ नहीं चल सकतीं । हरबंस इन दोनों को साथ-साथ करने की चेष्टा करता है और उसीमें असफल रहता है ।

मन्नू भंडारी द्वारा प्रणीत 'आपका बंटी' उपन्यास में अजय और शकुन की मनोवैज्ञानिक समस्याओं का मूल भी उनकी मनोवैज्ञानिक चेतना में है । शकुन भी नीलिमा की भाँति एक वैयक्तिक चरित्र है । वह एक कोलेज में आचार्या के पद पर आसीन है । प्रिन्सीपल होने के कारण अनेक प्राध्यापिकाएँ तथा कर्मचारी उसके मातहत काम करते हैं । अतः सत्ता का स्वाद वह चख चुकी है । सत्ता के इस नशे के कारण उसमें प्रभुत्व ग्रंथि का विकास होता है ।

इस प्रभुत्वग्रंथि के कारण ही वह अजय को भी उसी लाठी से हाँकना चाहती है, जिस लाठी से वह अपने अन्य मातहतों को हाँक रही थी। अजय भी एक स्वतन्त्र व्यक्ति-चेत्ता व्यक्ति है। हरबंस और अजय में अंतर यह है कि जहाँ हरबंस में आधुनिकता को लेकर एक प्रकार की पायी जाती है वहाँ अजय उससे मुक्त है। इसी 'हिपोक्रसी' के कारण ही हरबंस जब-तब समझौता कर लेता है। अतः हरबंस नीलिमा में खटापटी चलते हुए भी नौबत तलाक तक नहीं आती। वहाँ 'आपका बंटी' में अजय शकुन के आगे झुकता नहीं है, फलतः नौबत तलाक की आ जाती है। शकुन की तमाम समस्याओं के मूलमें अजय को पराजित न कर पाने का एक मनोभाव है। उसे हमेशा इस बात का मलाल रहता है कि वह अजय को अपने वश में नहीं कर पायी। अजय को न हरा पाने का यह क्षोभ ही उससे तरह-तरह के कार्य करवाता है। वह बंटी को पहले अपनी 'कस्टडी' में रखना चाहती है, अविवाहित रहना चाहती है। किन्तु जैसे ही वह देखती है कि तलाक के बाद अजय दूसरी लड़की से विवाह कर लेता है तो अजय को नीचा दिखाने के लिए ही वह डॉ. जोशी से विवाह कर लेती है। किन्तु शकुन और अजय की इन वैयक्तिक समस्याओं में बेचारा बंटी तो पीसकर रह जाता है। न वह घर का रहता है न घाट का, न माँ का रहता है न बाप का। त्रिशंकु-सी अधर में लटकती हुई उसकी नियति उसे एक समस्यात्मक (problemetic person) व्यक्ति ही बना सकती है।

निर्मल वर्मा द्वारा प्रणीत उपन्यास 'वे दिन' का अनाम नायक 'मैं' और नायिका 'रायना' की जो मनोवैज्ञानिक समस्याएँ है उनका उत्स भी उनकी वैयक्तिक चेतना में है। 'मैं' चेकेस्लोवेकिया के प्राग शहर में रहता है। उसकी जो समस्या है वह दो-तरफा अजनबीपन की समस्या है। भारतीय होने के कारण प्राग में उसकी गणना विदेशियो में, अजनबियोंमें होती है। उसके अपने देश भारत में भी वह शायद अजनबी ही माना जाएगा। एक स्थान पर वह

अपनी व्यथा को इन शब्दो में अभिव्यक्ति करता है - "हम ऐसे वर्षों में घर छोड़कर चले आये थे, जब बचपन का सबंध उससे छूट जाता है और बड़प्पन का नया रिश्ता जुड़ नहीं पाता । अब घर बहुत अवास्तविक-सा जान पडता था, जैसे वह किसी दूसरे की चीज हो, दूसरे की स्मृति हो । वह सब अर्थहीन था - और किंचित हास्यास्पद ।"[२] यह दो-तरफा अजनबीपन 'वे दिन' के नायक की भयानक त्रासदी है । इसके कारण उसमें एक मानसिक प्रकार की रिक्तता आ गयी है । वह एक प्रकार से उदासीनता और विषाद के वातावरण में निरंतर शुष्क और जरठ होता जा रहा है । कोई भी चीज उसे आंदोलित नहीं करती । ओस्ट्रियन युवती रायना जब कुछ समय के लिए प्राग आती है और नायक 'मैं' उसके इन्टरप्रीटर के रुपमें काम करता है, तब कुछ दिनों के लिए उसमें पुनः प्रेमभावना जाग्रत होती है, परन्तु रायना इस प्रेम को केवल शारीरिक धरातल पर ही भोगती है, या भोगना चाहती है । उसमें कोई भावनात्मक दखल नहीं है । अतः यह अनुभव नायक 'मैं' की जिन्दगी को ओर भी विषादपूर्ण बना जाता है ।

'वे दिन' की नायिका रायना एक ऑस्ट्रियन युवती है । उसने अपने पति जाक को तलाक दे दिया है । तलाकयाक्ता होते हुए भी वह एक स्वतंत्र और स्वछंद जिंदगी जी रही है। पर यह स्वतंत्र और स्वछंद जिंदगी मौज-मस्ती से जुड़ी हुई न होकर संत्रास, घुटन, मूल्यहीनता और अर्थहीनता से जुड़ी हुई है । रायना की जिन्दगी विषाद और अवसाद की जिन्दगी है । क्योंकि उसका अतीत युद्ध की काली, भयावह, अभिशप्त छाया से जुड़ा हुआ है । उसके जीवन के रेशे-रेशे में युद्ध की आक्रान्तता है । "युद्ध न केवल कुछ लोगों को अलग कर देता है, प्रत्युत् अपने पीछे एक काली विषाक्त अवसाद में डूबी हुई शांति को छोड़ जाता है, जिसे भागनेवाले व्यक्ति जीवित होते हुए भी संवेदना के स्तर पर मुर्दे के समान होते हैं ।"[३] रायना की संवेदना भी इस महायुद्धोत्तर

शांति के विषपान से भोंथरी और जरठ हो गयी है । स्वयं रायना इस संदर्भ में एक स्थान पर कहती है - "लेकिन कुछ चीजें हैं जो लड़ाई के बाद मर जाती है - शांति के दिनों . . . . हम उनमें से एक थे । . . . वे लोग घरेलू जिन्दगी में खप नहीं पाते । . . . मैं किसी काबिल नहीं रह गयी हूँ . . . नॉट इवन फोर लव । पीस कील्ड इट . . . "[४] इस वैयक्तिक चेतना के कारण रायना के लिए प्रेम की भावनात्मक सत्ता का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता है । उसके लिए प्रेम शारीरिक प्रेम ही है, महज एक आवश्यकता, हवा, पानी, अन्न की तरह । पेट की भूख की तरह पेढू की भूख को भी वह एक जैविक आवश्यकता समझती है । फलतः छुट्टियों में जब वह बाहर जाती है तो अपने मनोनुकूल कोई युवक को पा लेने पर वह उसकी संतुष्टि कर लेती है । उसमें तन के साथ मन का इन्वोलमेन्ट होता तो है, पर केवल क्षणिक । इस प्रकार जिन्दगी को उसके सातत्यमें न जीकर क्षणिक आवेगों और आवेशों में जीती है ।

"मुसीबत ही लगता मुझको, जीवन का रास्ता है ।
सुख की घड़ियाँ तो उसमें विराम स्थान हैं ।"[५]

यहाँ रायना के संदर्भ में विचार करें तो 'मुसीबत' के स्थान पर विषाद और घुटन को रख सकते हैं ।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बहुत-सी मनोवैज्ञानिक समस्याओं का उत्स वैयक्तिक जीवन प्रणाली और वैयक्तिक चेतना में होता है । वैयक्तिक चेतना यदि दूसरे प्रकार की है तो जो समस्या एक व्यक्ति विशेष के जीवन में उत्पन्न हुई, वह दूसरे व्यक्ति के जीवन में पैदा नहीं होगी । ऊपर मोहनराकेश के उपन्यास 'अंधेरे बन्ध कमरें' के संदर्भ में इसे भलीभांति विश्लेषित किया गया है । जो समस्या नीलिमा के सामने है वह शुक्ला के सामने नहीं है । कारण उनकी व्यक्तिगत चेतना के अंतर का है ।

५:०२:०२ पारिवारिक जीवन के संदर्भ में :

मानव जीवन की समस्याएँ परस्पर गुँथी हुई होती है । यह एक सुविदित तथ्य है । बहुत सी समस्याएँ ऊपरी तौर पर हमें पारिवारिक प्रतीत होती हैं । परन्तु यदि उनका मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे विश्लेषण किया जाय तो ज्ञापित होगा कि उन पारिवारिक समस्याओं के मूलमें कोई-न-कोई मनोवैज्ञानिक समस्या होती है ।

मन्नू भंडारी कृत 'आपका बंटी' उपन्यास में पारिवारिक जीवन के टूटने की त्रासदी है । अजय और शकुन का दाम्पत्यजीवन गड़बड़ा जाता है । जीवन की धूरी जब एक बार अपने पथ से विच्युत होती है तो फिर उसका सँभलना मुश्किल हो जाता है । अजय और शकुन के जीनव की धूरी भी गड़बड़ा जाती है । फलतः उनका परिवार टूटता है । संयुक्त परिवार टूटकर दम्पति-परिवार में सिमट गया । यहाँ दम्पति-परिवार के भी बिखरकर एकक परिवार में परिवर्तित होनेकी समस्या है । 'वे दिन' की रायना इस एकक परिवार का उदाहरण है । रायना उसका पूर्णरुपेण निर्वाह कर पाती है । उसके मूल में पश्चिमी-जगत की चेतना है । शकुन कुछ समय तो एकक परिवार का निर्माण करती है परन्तु बाद में डॉ. जोशी से विवाह करके वह पुनः एक नये दम्पत्ति-परिवार का निर्माण करती है । यह सब तो हो जाता है । अजय दूसरा विवाह करके एक नये जीवन की शुरुआत करता है । शकुन भी उसकी प्रतिक्रिया में अपना दूसरा संसार बसा लेती है । परन्तु बेचारे बंटी का क्या ? अतः ऊपरी तौर पर हमें यह समस्या पारिवारिक समस्या प्रतीत होती है । परन्तु यदि स्थितियों का विश्लेषण करें तो ज्ञात होगा कि शकुन और अजय के पारिवारिक जीवन में यह जो झंझावात आया है उसका मूल उनके अचेतन मन में कहीं-न-कहीं है । इसे जानने के लिए हमें मनोवैज्ञानिकों की तरह उनका 'केशस्टडी'

करना होगा । उपन्यास में जो कुछ संकेत प्राप्त होते हैं उनके आधार पर कहा जा सकता है कि अजय में कहीं-न-कहीं उसकी पृष्ठभूमि के ग्रामीण संस्कार है। उसका मन पुरुष की सत्ता को केन्द्र में स्थापित करता है । उसकी मनोवैज्ञानिक बनावटी ही पुरुष-प्रधान समाज के पुरुष की है । वह शकुन को अपने अनुशासन में देखना चाहता है । शकुन कुछ भी हो, प्रोफेसर या आचार्या, घर में उसे एक पत्नी के रुपमें ही रहना होगा। वहाँ वर्चस्व अजय का होगा । किन्तु शकुन की सामाजिक पारिवारिक पृष्ठभूमि अलग प्रकार की है । वह आधुनिका है । पश्चिम के नारी-मुक्ति आंदोलन और उसकी गतिविधियों से वाकिफ़ है । दूसरे वह आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर है । उसका अहम् अजय के वर्चस्व को नकारता है । परिणामस्वरुप प्रारंभ में वैचारिक टकराहट होती है, जो क्रमशः बढ़ते-बढ़ते पारिवारिक झगड़ों में बदल जाती है। अतः यह पारिवारिक-सी दिखनेवाली समस्या वस्तुतः दो इगोइस्ट मनों की टकराहट है ।

ठीक उसी प्रकार 'अंधेरे बन्द कमरे में' हरबंस और नीलिमा का दाम्पत्य भी खण्डित होने के कगार पर है । प्रकटतः यह पारिवारिक समस्या है। किन्तु यदि सूक्ष्मतया देखा जाय तो उसके पीछे भी मनोवैज्ञानिक कारण दृष्टिगत होंगे । इस उपन्यास में यह तथ्य गौरतलब है कि हरबंस और नीलिमा के 'कॉर्टशीप' के दिन तो रंगीनियों में व्यतीत होते हैं । समस्याओं का प्रारंभ विवाह के बाद होता है । यहाँ पर भी यह मनोवैज्ञानिक सिध्धान्त कार्य करता है कि आकर्षण अप्राप्त के प्रति होता है । कोर्टशीप के दिनो में नीलिमा अप्राप्त की कोटि में थी । अतः उसके प्रति हरबंस का बेतहाशा आकर्षण था । नीलिमा उसके चेतना की धूरी थी । किन्तु पत्नी होने के बाद नीलिमा 'प्राप्त' की कोटि में आ जाती है । फलतः आकर्षण क्रमशः विलुप्त होने लगता है । तब आकर्षण नीलिमा की छोटी बहन शुक्ला के प्रति जगता है । क्योंकि साली होने के

कारण शुक्ला अप्राप्त की कोटि में आती है ।

औद्योगिकरण, नगरीकरण, वैश्विकरण आदि के कारण पारीवारिक संकट गहरा रहा है । औद्योगिकरण और नगरीकरण के प्रारंभिक दौर में ही संयुक्त परिवार की बुनियाद हिलने लगी थी । अब जैसे-जैसे समय व्यतीत हो रहा है परिवार की विभावना संकुचित और सीमित होती जा रही है। निर्मलवर्मा कृत उपन्यास 'वे दिन' की रायना अब एकक परिवार की परिस्थिति में आ गई है। इस प्रकार देखा जाय तो रायना और जाक की त्रासदी परिवार के टूटने की त्रासदी है । उनका एक बच्चा है - मीता । माँ-बाप के रहते हुए वह बोर्डिंग स्कूल में पढ़ता है । छुट्टियों में माँ-बाप उसे बारी-बारी से रखते हैं । जाक और रायना एक दूसरे से अलग हो गये हैं । अतः यहाँ खंडित परिवार की समस्या है । अतः प्रकटतया इसे हम एक पारिवारिक समस्या मान सकते हैं । किन्तु यदि इसका विश्लेषण करें तो ज्ञात होगा कि इस पारिवारिक समस्या का मूल मनोवैज्ञानिक समस्याओं के भीतर है । रायना और जाक दोनों विश्वयुद्ध की विभीषिका के शिकार हैं । युद्ध में जिन नृशंस और बर्बर स्थितियों से वे गुजरे हैं, उन स्थितियों ने उनकी मानवीय संवेदना को खत्म कर दिया है । जीवन के प्रति आस्था या मानवीय मूल्यों का उनके लिए कोई अर्थ नहीं रह गया है । फलतः संवेदना के स्तर पर दोनों का मर्म मर चुका है । परिणामतः पति-पत्नी में जो एक संवेदनात्मक, आवेगात्मक भाव होता है उसका उनके जीवन में कोई महत्व नहीं रह गया है। दूसरे पश्चिम की व्यक्तिवादी, भौतिकवादी दृष्टि से भी इनको नितांत स्वकेन्द्री (self-centred) बना दिया है । छुट्टियों में बच्चे के प्रति कोई लगाव का भाव नही है, केवल जिम्मेदारी को शेयर करने का भाव है । जाक और रायना मन या आत्मा के स्तर पर नहीं जी रहे, केवल शरीर के धरातल पर ही जी रहे हैं । फलतः रायना जब-जैसी आवश्यकता होती है किसी पुरुष की अंकशायिनी होकर अपनी

शारीरिक क्षुधा को तृप्त कर लेती है । संभोग उसके लिए महज एक शारीरिक आवश्यकता है । यही बात जाक के संदर्भ में भी है ।

इस उपन्यास के अनाम नायक 'मैं' का भी कोई परिवार नहीं है। विदेश में वह अकेला रहता है । पश्चीम में व्यक्तिवादी भौतिकवादी चिंतन के कारण जो अजनबीपन का भाव बढ़ रहा है, 'मैं' उसका शिकार है । पारिवारिक भावनाओं से वह इतना दूर जा चुका है उसका प्रमाण उपन्यास में ही मिल जाता है । स्वदेश से उसकी बहन का एक पत्र आया है, किन्तु कई-कई दिनों तक वह उसको पढ़ता तक नहीं है । बल्कि होना उसके विपरीत चाहिए । जब कोई व्यक्ति अपने देश से बिछुड़कर विदेश में अकेला रहता है तो अपने देश की छोटी-से-छोटी खबर के लिए भी वह तड़पता रहता है । किन्तु यहाँ ऐसा नहीं है । कारण स्पष्ट है अपने वतन में उसकी जड़ें मजबूत नहीं थी । वहाँ से कटकर ही वह प्राग आया है । घर-परिवार के प्रेम का उसे कोई अहसास ही नहीं है । विदेश में भी उसे दुत्कार ही मिला है । यहाँ पर भी उसका शुमार विदेशियों में होता है । उसके कारण उसका दर्जा यहाँ पर भी उसकी अवस्था दोयम दर्जे पर है । इस अजनबीपन के भाव के कारण उसका संवदेना-पक्ष भौंथरा पड़ गया है । रायना के प्रति कुछ आकर्षण जाग्रत होता है, वह मन ही मन उसे प्रेम करने लगता है । परन्तु रायना का शुष्क व्यवहार कदाचित उसकी रही-सही संवेदना को भी खत्म कर देगा । रायना के लिए प्रेम महज एक शरीर का सौदा है उसका कोई भावात्मक involvement उसमें है ही नहीं, जब कि नायक उसे भावनात्मक स्तर पर लेता है । फलतः रायना का वापस जाना उसे एक नया आघात दे सकता है । हो सकता है, ऐसे दो-एक अनुभवों से गुजरने के बाद नायक स्वयं संवेदना-स्तर पर रायना की तरह भौंथरा हो जाय ।

५:०२:०३ सामाजिक जीवन के संदर्भ में :

कई बार ऊपरी तौर पर हमें सामाजिक समस्या लगती है, किन्तु यदि उस पर विचार किया जाय तो कहीं गहरी मनोवैज्ञानिक समस्या दृष्टिगोचर होती है । हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के प्रणेता जैनेन्द्रकुमार के उपन्यास 'त्यागपत्र' में हमें बहुत-सी ऐसी सामाजिक समस्याएँ मिलती हैं जिनका मूल किसी-न-किसी प्रकार की मनोवैज्ञानिक समस्या में पाया जाता है । उपन्यास की नायिका मृणाल अपनी वयःसंधि अवस्था में अपनी सहेली शीला के भाई से प्रेम करती है । शीला का भाई डॉक्टरी में पढ़ता था और उस समय की स्थितियों को देखते हुए हम उसे एक आदर्श युग्म कह सकते हैं । किन्तु जातिवाद के कारण उन दोनों का विवाह नहीं हो पाता है । मृणाल के माता-पिता का देहांत हो गया था और उसकी परवरिश भाई-भाभी के संरक्षण में हो रही थी । भाई स्नेहार्द्र तथा उदार प्रकृति के थे किन्तु भाभी का अनुशासन बडा कठोर था ।[६] मृणाल शीला के भाई को चाहती है और उन दोनों में प्रेम सम्बन्ध है, ऐसा जब मृणाल की भाभी पर प्रकट हो जाता है तब वह झटपट उसकी शादी एक अधिक उम्र के दोहाजू व्यक्ति से कर देती है । उम्र, संस्कार, रूचियाँ, किसी भी मामले में दोनों में मेल नहीं है । मृणाल सुंदर, कमसीन, कोमल, उदार और आत्मपीड़क लड़की है । तो उसका पति कठोर, जड़ और रुढ़िवादी है । अतः मृणाल जब शीला के भाई के पत्र का जिक्र करती है, तब उसका पति आगबबुला हो जाता है और उसे हरामजादी और कुल्टा कहता है । उसके बाद वह मृणाल को अपने घर से निकाल देता है ।

अतः बाह्यतः देखा जाए तो यह एक अनमेल विवाह की समस्या है । किन्तु मृणाल का पति उसका जो परित्याग कर देता है उसके पीछे कई मनोवैज्ञानिक कारण हैं । मृणाल और उसके पति की उम्र में काफी अंतर है ।

अतः एक नवोढ़ा जिस उत्साह से अपने पति को मिलती है उसका उसमें अभाव है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि दो हमउम्र व्यक्ति ही मानसिक तथा शारीरिक दृष्टि से परस्पर खुल कर मिल सकते हैं। दूसरे यहाँ पर मृणाल तथा उसके पति उभय के मन में एक प्रकार का अपराध-बोध (guilt) है। मृणाल के अवचेतन मन पर इस बात का बोझ है कि विवाह से पूर्व वह शीला के भाई को चाहती थीं। मृणाल के चेतन मन में संस्कारों की जो छबि है उसके अनुसार वह स्वयं को आत्मिक दृष्टिसे अपवित्र समझती है। उसके अवचेतन मन की ग्रंथि खुल जाती, यदि उसके पति में उदारता का भाव होता, स्थितियों को समझने की समझदारी होती; किन्तु वह तो पुरानेविचारों का एक खरदिमाग व्यक्ति था। मृणाल अपने अपराध बोध से मुक्त होने के लिए अपने पति से सबकुछ कह देती है। मृणाल कहती है - ''ब्याह के बाद मैंने बहुत सोचा, बहुत सोचा। सोचकर अंत में यही पाया कि मैं छल नहीं कर सकती, छल पाप है। हुआ जो हुआ, ब्याहता को पतिव्रता होना चाहिए। उसके लिए पहले उसे पति के प्रति सच्ची होना चाहिए। सच्ची बनकर ही समर्पित हुआ जा सकता है।''[७]

मृणाल का पति यदि सुशिक्षित, संस्कारी और उदारमना होता तो वह मृणाल को माफ कर देता। ऐसा करने से मृणाल की दृष्टि में वह काफ़ी उपर उठ जाता। उसके अंतर्मन की ग्रंथि भी खुल जाती और तब उनका दाम्पत्य जीवन सुखपूर्वक व्यतीत हो सकता था।

मृणाल के पति के मनमें भी ग्रंथि है। वह लाख प्रदर्शन करें किन्तु उसके अचेतन मन में जो गाँठ है वह किसी प्रकार खुल नहीं सकती कि वह मृणाल से उम्र में काफ़ी बड़ा है। वह युवान नहीं है। ऐसे लोगों के मन में हमेशा शंका के कीड़े कुलबुलाते रहते हैं। अतः मनोवैज्ञानिक दृष्टिया ऐसे लोग

स्वस्थ नही रह सकते । मुंशी प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' में तोताराम अपनी बहादुरी के किस्सों द्वारा अपनी कमी को छिपाने की चेष्टा करता है । ठीक उसी प्रकार यहाँ पर मृणाल का पति अपनी आर्थिक संपन्नता, कुलीनता तथा सरकारी ऊँची नौकरी के माध्यम से मृणाल पर अपना रूआब जमाना चाहता है । साहचर्य से कुछ समय के बाद शायद उनकी ये ग्रंथियाँ शांत हो जाती । किन्तु मृणाल का स्पष्टीकरण आग में घी का काम करता है । पहले तो मृणाल का पति स्वयं में कोई क्षति ढूंढ रहा था, किन्तु मृणाल के स्पष्टीकरण के कारण वह मृणाल पर हावी हो जाता है । सचमुच में मृणाल और शीला के भाई के बीच विशुद्ध प्रेम सम्बन्ध था, जिसे हम Platonic love भी कह सकते हैं, किन्तु मृणाल का पति अपनी कुंठाओं के कारण यह समझने लगता है कि मृणाल प्रकृत्या ही पतिता है । और इसीलिए अन्य पुरुषों सें उसका सम्बन्ध अब भी होना चाहिए । इन शंकाओं के कारण अपनी कुलीनता के ego में वह मृणाल का परित्याग करता है ।

यह भी एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि अपनी किसी कमजोरी को ढांकने के लिए व्यक्ति किसी और बात का सहारा लेता है । यहाँ मृणाल का पति किसी लिहाज से मृणाल के योग्य नहीं है । उसका अंतर्मन भी यह जानता है । अतः कुलीनता के egoist खयालों के द्वारा वह उसे ढाँपना चाहता है । इस प्रकार प्रकट तथा सामाजिक-सी दिखनेवाली यह समस्या सचमुच में एक मनोवैज्ञानिक समस्या है ।

जैनेन्द्र के ही उपन्यास 'परख' में उसकी नायिका कट्टो एक बालविधवा है । कट्टो का विवाह शैशवकाल में ही हो गया था । उसे तो पहले यह भी नहीं मालूम था कि वह विधवा है । किन्तु जैसे-जैसे बड़ी होती है आसपास के वातावरण से उसे अपनी स्थिति के बारे में पता चलता जाता है । सत्यधन

युनिवर्सिटी में पढ़ता है । आदर्शों और ऊँचे विचारों में खोया रहता है । छुट्टियाँ में जब-जब वह अपने गाँव आता है । कट्टो को पढ़ाता है । सत्यधन कट्टो के मन में झूठी आशा भी जगाता है । कट्टो मन-ही-मन उसे चाहने लगती है । इसी कारण वह मेले से सुहाग और शृंगार के साधन भी खरीद लाती है । परन्तु सत्यधन के मन में कट्टो और गरिमा के बीच में द्वन्द्व, चलता रहता है । उसका मन घड़ी के पेंडुलम की तरह कभी गरिमा की तरफ जाता है तो कभी कट्टो की तरफ । अंततः वह गरिमा से विवाह कर लेता है । यहाँ समस्या विधवा-विवाह की है । एक सामाजिक प्रकार की समस्या है । उपन्यास में जो समय निरूपित हुआ है, उसमें विधवा-विवाह सहज नहीं तो असंभव भी नहीं थे । नवजागरण के आंदोलन के कारण समाज में नवसुधार का वातावरण था । लोग विधवा-विवाह के संदर्भ में सहानुभूतिपूर्वक सोच रहे थे और छुट-पुट रूपसे विधवा-विवाह हो भी रहे थे । अतः समाज के थोड़े बहुत विरोध के साथ सत्यधन कट्टो का विवाह हो सकता था, किन्तु ऐसा नहीं होता है इसके मूल में सत्यधन के अवचेतन मन में पड़ी हुई ग्रंथियाँ हैं । सत्यधन के पिता की मृत्यु बहुत पहले हो गई थी । मां ने पालपोसकर बड़ा किया था । और वकालत तक पढ़ाया था । जिस स्थितिमें सत्यधन का पालन पोषण होता है उसमें वह सतत एक प्रकार की मानसिक असुरक्षा से पीड़ित रहता है । यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि असुरक्षित याना असुरक्षा का भाव व्यक्ति में हीनताबोध उत्पन्न करता है । ऐसी व्यक्ति की मनः स्थिति कभी स्थिर नहीं रह पाती है । एसी व्यक्ति उचित समय पर उचित निर्णय नहीं ले पाता है । मानसिक दृष्टिसे वह हमेशा ढुलमुल अवस्था में रहता है । ऐसे व्यक्ति में आत्मविश्वास की भी कमी होती है और इसलिए अपने पैरों पर खड़े होने के बदले वह सदैव दूसरों पर अवलम्बित रहने में स्वयं को सुरक्षित समझता है । सत्यधन पढा-लिखा है, वकालत की है । वकालत के बलबूते पर आत्मनिर्भर भी हो सकता है परन्तु जैसा कि पहले कहा गया इस प्रकार के व्यक्ति में आत्मविश्वास का

अभाव रहता है और फलतः जीवन-संग्राम में वह कभी भी चुनौतियाँ का सामना नहीं कर पाता । वह हमेशा सुरक्षित रास्तों की तलाश में रहता है । सत्यधन भी गरिमा से इसीलिए विवाह करता है । कट्टो से विवाह करने में असुरक्षा ही असुरक्षा है । गरिमा के पिता संपन्न हैं । उनकी वकालत भी खूब चल रही है और उन्होंने काफ़ी संपत्ति भी बटोर ली है । ऐसी स्थिति में गरिमा से विवाह करने में किसी प्रकार की असुरक्षा की दहशत नहीं रहती । जीवन बिना जोखमों के जिया जा सकता है । इस प्रकार सत्यधन कट्टो से विवाह नहीं कर सका उसके पीछे सामाजिक पृष्ठभूमि या सामाजिक रीतिरिवाज उत्तरदायी नहीं है । उसमें कारण सत्यधन के अचेतन मनमें पड़ी हुई असुरक्षा की भावना ही है ।

कट्टो को लेकर सत्यधन के मन में एक प्रकार का अपराध-बोध है । उससे मुक्त होने के लिए सत्यधन अपने मित्र और गरिमा के भाई बिहारी को प्रेरित करता है । बिहारी एक मस्त और फक्कड प्रकृति का व्यक्ति है । वह कट्टो को चाहने भी लगता है । परन्तु जब उसे ज्ञात होता है कि कट्टो सत्यधन का मन ही मन वरण कर चुकी है । तब दोनों एक नये प्रकार का आध्यात्मिक विवाह करते हैं । यह इस प्रकार का विवाह है जिसमें शारीरिक मिलन नहीं होगा । मानसिक मिलन होगा । वे दोनों समाज सेवा का मार्ग अखत्यार करते हैं । यहाँ पर भी उपरी तौर पर कारण सामाजिक लगता है, किन्तु यदि उनकी अवचेतन तहों का विश्लेषण किया जाय तो ज्ञात होगा कि सत्यधन के द्वारा ठुकराये जाने पर कट्टो के अवचेतन मन के ego को ठेस पहुँचती है । इस ठेस के कारण ही वह अन्य किसी से विवाह की बात को ठुकरा देती है । बिहारी के पक्षमें मनोवैज्ञानिक कारण यह हो सकता है कि बिहारी एक विधवा से विवाह करने में तो कोई आपत्ति नहीं हो सकती है, बल्कि उत्साहपूर्वक विधवा-विवाह करने को वह उद्यत होता है । समाज सुधार का काम है, नारी

उध्धार का काम है वहाँ तक तो ठीक है, परन्तु बिहारी का अचेतन मन्र और पुरुषसत्ताक समाज द्वारा पोषित उसका व्यक्तिगत ego उच्छिष्ठ को स्वीकार नहीं कर सकता । इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखक विधवा-विवाह की समस्या को एक दूसरी दिशा में ले जाता है । उसके कारण सामाजिक नहीं अपितु मनोवैज्ञानिक हैं ।

५:०२:०४ आर्थिक पक्ष के संदर्भ में :

पूर्ववर्ती पृष्ठो में मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों के अंतर्गत आर्थिक कुंठाओं का जिक्र किया गया है । लघुताग्रंथि के अनेक कारणों में एक कारण अर्थगत कुंठा भी है । जो व्यक्ति आर्थिक दबावों में जीता है वह मानसिक दृष्टि से कभी स्वस्थ नहीं रह पाता है । अर्थगत कुंठा के कारण वह हमेशा हीनताबोध से ग्रसित रहता है । कहने का अभिप्राय यह है कि व्यक्ति की आर्थिक स्थितियाँ कई बार मनोवैज्ञानिक समस्याओं को उत्पन्न करती हैं ।

जैनेन्द्रकुमार कृत 'त्यागपत्र' की मृणाल आत्मपीड़क प्रवृत्ति (machoist) की रही है । उसकी इस मनोवैज्ञानिक स्थिति के लिए उसकी आर्थिक परनिर्भरता उत्तरदायी है । जब स्कूल में पढ़ती थी तब वह आर्थिक दृष्टिया भाई-भाभी पर निर्भर थी । उसके माता-पिता बचपन में ही गुजर गये थे । भाई उदार थे किन्तु भाभी का स्वभाव कठोर था । दूसरे कोई भी लड़की अपने माता-पिता के सम्मुख आर्थिक दृष्टिसे जितनी स्वतंत्रता महसूस करती है, उतनी स्वतंत्रता भाई-भाभी के सम्मुख नहीं कर सकती । इन आर्थिक दबावों के कारण उसमें जो मनोवैज्ञानिक ग्रंथि पैदा होती है उसके कारण वह आत्मपीड़क हो जाती है । विवाह के उपरान्त वह पति पर निर्भर रहती है । पति जब त्याग देता है तो आश्रयदाता पर निर्भर रहती है उसमें उसका व्यक्तित्व दबा हुआ और कुण्ठित रहता है । मृणाल का खिला हुआ और खुला हुआ व्यक्तित्व हम तब

देखते हैं, जब वह एक स्कूल में पढ़ा रही थी और साथ ही एक सभ्रान्त परिवार में बच्चों को ट्युशन दे रही थी । यहाँ पर वह आर्थिक दृष्टिया आत्मनिर्भर होती है, अतः आर्थिक कुंठाओं से मुक्त होती है ।

आर्थिक दबाव किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्वको कैसे और कितना प्रभावित करते हैं उसका परीक्षण हम उषाप्रियंवदा के दो उपन्यासों की नायिकाओं के तुलनात्मक विश्लेषण से कर सकते हैं । ''पचपन खंभे लाल दीवारें'' कि नायिका सुषमा एक मध्यक्ति परिवार की लड़की है । पिता पहले नौकरी में थे किन्तु निवृत्त होकर लकवाग्रस्त हो गये हैं । सुषमा घर में सब से बड़ी है और योग्य भी । अच्छे डिविजन से एम. ए. किया है, अतः कॉलेज में लेक्चरर हो जाती है । ऐसे में यदि उस पर पारिवारिक उत्तरदायित्व न होते तो उसका व्यक्तित्व कुछ और ही प्रकार का होता । आर्थिक दबावों के कारण वह अपने मन को मारकर जी रही है । अपने घर-परिवार की स्थितियों को देखते हुए वह अविवाहित रहने का निर्णय करती है और तदनुरूप संयमपूर्ण जीवन व्यतीत करती है । परंतु अप्रत्याशित रूपसे नील नामक युवक का उसके जीवन में प्रवेश होता है । वह नील को बेतहाशा चाहने लगती है । संयम का बाँध टूट जाता है । परन्तु थोड़े ही समय में उसके सामने उसकी भयंकर वास्तविकता उपस्थित हो जाती है । वह मन मसोस कर रह जाती है कि उस जैसी लड़की को प्रेम करने का भी अधिकार नहीं है । उसका जीवन तो कॉलेज के पचपन खंभों की तरह अचल और अटल है । साल-दरसाल समय गुजरता जाएगा, बहुत कुछ बदल जाएगा, उसके आसपास की दुनिया बदल जाएगी, उसके अपने घर की दुनिया भी बदल जाएगी । बदलाव नहीं आयेगा केवल उसके अपने जीवन में । इस प्रकार घोर निराशा की अवस्थामें वह डिप्रेशन की शिकार हो जाती है । सुषमा पर यदि उपर्युक्त आर्थिक दबाव नहीं होते, या उसके परिवार में और एक दो कमानेवाले होते, या उनके पास जमीन-जायदाद

होती तो सुषमा का और ही प्रकार का व्यक्तित्व हमारे सामने आ सकता था। कॉलेज में लेक्चरर होते हुए भी सुषमा बुझी-बुझी-सी रहती है । लेखिकाने इसी उपन्यास में एक अन्य महिला लेक्चरर के जीवन को रूपायित किया है। अकेलेपन से गुजरते हुए वह भयंकर रूपसे कर्कशा और कठोर हो जाती है। जिसके कारण वह निरंतर भुनभुनाती रहती है । सुषमा के जीवन में अभी वह स्टेज नहीं आया है किन्तु जिन परिस्थितियों से वह गुजर रही है उनको देखते हुए सुषमा के जीवन की वैसी परिणति को हम नकार नहीं सकते ।

इसके विपरीत उषा प्रियंवदा के ही दूसरे उपन्यास 'रूकोगी नहीं राधिका ?' की राधिका बहुत ही स्वतंत्र और उन्मुक्त मिजाज की लड़की प्रतीत होती है । कारण स्पष्ट है राधिका के जीवन में कोई आर्थिक समस्या नहीं है। इलेक्ट्रा कॉम्पलेक्ष के कारण पिता को छोड़कर जब विदेश जाती है तब पीटरसन उसके साथ होता है । दूसरे वह आधुनिक वातावरण में पली-बढ़ी लड़की है, सुशिक्षित है। अपनी शिक्षा के बल पर विदेश में भी जोब ढूंढ लेती है। उसका अपना खर्चा चलाने के लिए उतना उसके लिए काफ़ी होता है । कम से कम चिंता उसके लिए अपनी है, परिवार की ओर से कोई आर्थिक दबाव नहीं है । विदेश में रहकर उसे यह चिंता नहीं सताती कि वतन में उसके घर-परिवार के लोग कैसे जी रहे होंगे । पिता सम्पन्न है, भाई भी व्यवसाय में लगा हुआ है और संपन्न है । अतः राधिका बिन्दास्त है । उसकी इस बिन्दास्तगी के पीछे उसका आर्थिक दबावों से मुक्त होना एक मुख्य कारण है। जिस प्रकार सुषमा आर्थिक दबावों से जूझ रही है उस प्रकार की कोई भी समस्या राधिका के सम्मुख नहीं है । विदेश से आकर पिता के साथ रहने लगती है, किन्तु जब उसका एक मित्र दक्षिण भारत की यात्रा के लिए कहता है, तो वह तुरंत चल पड़ती है। जहाँ पैसा होता है वहाँ दिक्कतें और समस्याएँ नहीं होतीं ऐसा नहीं है, किन्तु ऐसी स्थिति में हर समस्या के दस हल निकल

आते हैं किन्तु व्यक्ति जब आर्थिक समस्याओं में घिरा हुआ होता है, तब वह समस्याओं के महासागर में गूम हो जाता है ।

रजनी पनिकर के उपन्यास 'दो लड़कियाँ' की रंजना अपराध बोध से पीड़ित है । इस उपन्यास में रागात्मक सम्बन्धों के व्यवसायिक होते जाने की पीड़ा को लेखिका ने बड़ी कलात्मक ढंग से उकेरा है । रंजना एक एम. ए. पास लड़की है, किन्तु उसे अपनी योग्यता के अनुसार काम नहीं मिलता । फलतः जो भी नौकरी मिले उसे करने के लिए वह मजबूर है । एक स्थान पर वह कहती है - ''मैं किसी शौक को पूरा करने के लिए या फैशन पूरा करने के लिए नौकरी नहीं करती । मैं काम इस लिए करती हूँ कि घर की आवश्यकताएँ पूरी हो जाएं । परिवार के लोगों को दोनों समय का भोजन मिल सके ।''[८]

'पचपन खंभे लाल दीवारे' की सुषमा को अपने घर परिवार के लिए नौकरी करनी पड़ती है । 'टेराकोटा' के मिति भी इसी कारण नौकरी करती है परन्तु ये दोनों रंजना से बहतर स्थिति में है । सुषमा कॉलेज में लेक्चरर है और मिति आइ. ए. एस करके सीविल सर्विस में चली जाती है । रंजना की विवशता यह है कि उसे अपनी योग्यता के अनुसार नौकरी नहीं मिलती । नौकरी में वेतन इतना कम होता है कि अतिरिक्त अर्थोपार्जन के लिए उसे अपने देह को भी माध्यम बनाना पडता है । रंजना अपने जैसी लड़कियों की नियति को बखूबी जानती है । शादी-ब्याह करके वे अपनी घर-गृहस्थी बसा सकती है किन्तु उनकी परिवार प्रतिबद्धता उनको ऐसा करने से रोकती है, क्योंकि ऐसा करने से उनका परिवार भूखा मर सकता है । नौकरी करना ऐसी लड़कियों की कमजोरी हो जाती है और एकबार किसी अफसर, मेनेजर, बिजनेजमेन या बोस को इस बात का पता चल जाय तो वे उसकी इस लाचारी का पूरा-पूरा फायदा

उठाते हैं । शुरू शुरू में देह का यह सौदा उनकी विवशता के कारण होता है किन्तु धीरे-धीरे यह उनकी आवश्यकता हो जाता है । जो स्त्री प्रकृत्या ठंडी होती है वह तो बिना विवाह के भी अपना समय काट सकती है । किसी काम या व्यवसाय मे स्वयं को झोंक कर अपने अकेलेपन को मिटा सकती है । किन्तु जो स्त्री साधारण (Normal) होती है, उसके शरीर को भी अपनी एक आवश्यकता होती है । शरीरधर्म को अनदेखा नहीं किया जा सकता । जीवन में हवा, पानी और खुराक की भाँति सेक्स की भी अपनी एक अहमीयत है । यह शरीरधर्म की पूर्ति सामान्य तौर पर समाज में विवाह के द्वारा हो जाती है । विवाह समाज द्वारा मान्यता प्राप्त संस्कार है । पति-पत्नी को समाज में लोग इज्जत से देखते हैं । परन्तु रंजना जैसी लड़कियों की मजबूरी यह होती है कि विवाह करके अपने शरीर धर्म की पूर्ति वह नहीं कर सकती । जो स्त्री ठंडी होती है उसके सामने समस्या केवल अकेलेपन की होती है । रंजना की समस्या केवल अकेलेपन की नहीं है, शरीर धर्म की भी है । अतः ऐसी लड़कियाँ जो विवाह करना तो चाहती है, किन्तु विवाह कर नहीं सकती । वे एक दूसरा रास्ता अखत्यार करती हैं । वे नौकरी करते-करते किसी युवक से शारीरिक दृष्टिसे जुड़ना चाहती हैं और ऐसा युवक अधिकांशतः कोई विवाहित पुरुष ही हो सकता है । क्योंकि अविवाहित व्यक्ति तो उसे विवाह के लिए प्रेरित करेगा । वह विवाह के लिए उस पर दबाव करेगा । 'पचनप खंभे लाल दीवारें' का नील और 'टेराकोटा' का रोहित ऐसा ही युवक है और इसीलिए सुषमा और मिति को अपने इन प्रेमियों से अलग होना पड़ता है । अतः रंजना जैसी लड़कियों को किसी विवाहित पुरुष का ही सहारा लेना पड़ता है । समाज़ में बहुत से पुरुष होते हैं जो आर्थिक दृष्टि से संपन्न होते हैं । उन्हें पत्नी के अतिरिक्त प्रेयसी पालने का एक शौक होता है । पुराने जमाने में सामंतवर्ग के लोग अनेक पत्नियों और उपपत्नियों को रखते थे । इस लोकतंत्र में यह तो संभव नहीं है किन्तु पुरुष की जो वृत्ति है वह आज भी जहाँ की तहाँ है । अतः

आज के युग में संपन्न वर्ग के पुरुष पत्नी के अतिरिक्त प्रेयसी या प्रेयसियाँ रखने में एक प्रकार की शान समझते हैं । तथाकथित उच्च वर्ग में तो इसे 'स्पेरव्हील' का नाम दिया गया है । ऐसे लोग रंजना जैसी किसी लड़की की तलाश में रहते हैं जो शारीरिक दृष्टि से जुड़ना तो चाहती है पर विवाह से दूर रहती है । आधुनिक युग में जहाँ संतति नियमन के अनेक साधन उपलब्ध होते हैं वहाँ ऐसे सम्बन्धों को वह पुराना खतरा भी नहीं होता । रंजना भी राजन नामक एक व्यक्ति से साहचर्य प्राप्त करती है । राजन प्रेम का नाटक तो बहुत करता है परन्तु वक्त आने पर ठेंगा बता देता है । राजन जैसे हवसखोर लोगों को अपने हवस के लिए किसी-न-किसी सुन्दर महिला का शरीर चाहिए । पुराने लोग पत्नी के अलावा उपपत्नी रखते थे, परन्तु उनमें एक प्रकार का दायित्व बोध भी रहता था । अपने उत्तरदायित्व से वह कतराते नहीं थे, परन्तु आधुनिक काल के यह हवसखोर लोग तो वक्त आने पर अपनी इस प्रेयसी को धत्ता भी बता देते हैं ।

रंजना जैसी लड़कियों में जो अपराधबोध की भावना होती है, वह दो-तरफा होती है । एक तो उनका यह सम्बन्ध समाज द्वारा, धर्म द्वारा, नैतिकता के मानदंडो द्वारा मान्य नहीं होता; अतः उनका अंतर्मन उनको हमेशा धिक्कारता रहता है । एक अशुचिता का, अपवित्रता का भाव, कुछ गलत कर रहे हैं ऐसा भाव उनके मनोमस्तिष्क पर रहता है । फलतः वे हीनताग्रंथि से ग्रसित हो जाती हैं । दूसरी तरफ एक अन्य प्रकार का पापबोध भी उन्हें खाये जाता है कि वे किसी अन्य स्त्री के जीवन को बरबाद कर रहीं हैं । उनकी घर-गृहस्थी को बरबाद कर रही है, किसी दूसरे का अधिकार छिन रही है । अतः यह पापबोध-अपराधबोध भी उन्हें चैन से जीने नहीं देता । हाँ, कोई एकदम ढ़ीढ स्त्री हो जिसने अपनी चेतना और संवेदना को खत्म कर दिया है, ऐसी स्त्री को इस प्रकार का अपराधबोध नहीं व्यापता । बलकि कई बार तो वे इसे

अपना अधिकार समझती है । किन्तु रंजना इस प्रकार की नहीं है । अतः एक प्रकार का अपराधबोध उसे निरंतर पीड़ित करता है। फलतः वह प्रतिक्षण मानसिक यंत्रणा से गुजरती है । रंजना की यह मानसिक यंत्रणा, उसका यह अपराधबोध एक मनोवैज्ञानिक समस्या है । किन्तु यदि हम उसका विश्लेषण करेंगे तो ज्ञापित होगा कि उसका उत्स आर्थिक अभावों में दबा पड़ा होगा ।

५:०२:०५ जैविक स्थिति के संदर्भ में :

जैविक स्थिति से अभिप्राय व्यक्ति की लैंगिक स्थिति से है । व्यक्ति स्त्री या पुरुष, नर या नारी या नर या मादा है इस स्थिति को जैविक स्थिति कहते हैं । कई बार जब हम मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर विचार करते हैं, तब यह ज्ञापित होता है कि इस या उस मनोवैज्ञानिक समस्या के भीतर व्यक्ति की जैविक स्थिति भी कारणभूत होती है । कई बार ऐसा प्रतीत होता है कि एक व्यक्ति जो नर है, और उसकी जो मनोवैज्ञानिक समस्या है, वैसी समस्या यदि वह नारी हो तो कदाचित नहीं भी हो सकती है । ठीक इसके विपरीत यदि कोई समस्या किसी नारी के संदर्भ में है, तो जैविक स्थिति के बदलने पर कदाचित वह समस्या नहीं रहती है ।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । आदिम अवस्था से ही मनुष्य एक वर्ग या समूह में रहता आया है । इसी वर्ग या समूह को हम समाज कहते हैं । समाज के अपने नीति-नियम होते हैं । इन नीति-नियमों का निर्माण हजारों वर्षो की सुदीर्ध परंपराओं से होता है । प्रत्येक समाज की अपनी एक सभ्यता होती है, अपनी एक संस्कृति होती है । उसके अनुसार उसके रीति-रिवाज, विश्वास-अविश्वास, परंपराओं और मान्यताओं का निर्माण होता है । व्यक्ति की जैविक स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न समाजों में ये सब बदलते रहते हैं । किसी भी समाज विशेष में नर और नारी को लेकर भिन्न-भिन्न प्रकार के रीतिरीवाज और

मान्यताएँ उपलब्ध होते हैं । अर्थात एक बात जो नर को लागू होती है नारी पर उसे लागू नहीं किया जा सकता । हमारे यहां नारी को कई प्रकार के अनुशासन और बंधनो में रहना पड़ता है । शिक्षा के प्रचार-प्रसार तथा नारी-चेतना के कारण इसमें थोड़ा बहुत अंतर आया है । किन्तु यह अंतर सीमित वर्गसमूहो में पाया जाता है और नगण्य-सा है। अभी व्यापक समाज में, स्थितियों में कोई विशेष अंतर नहीं आया है । नर और नारी ये दो स्वतंत्र इयत्ताएँ हैं, अतः उनकी अपनी-अपनी समस्याएँ होती हैं । समस्याएँ यदि मनोवैज्ञानिक प्रकारकी होती हैं तो भी ये समस्याएँ नर-नारी के संदर्भ में भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती हैं ।

उदाहरण के तौर पर 'पचपन खंभे लाल दीवारें' की सुषमा की जो मनोवैज्ञानिक समस्या है, वह एक विशिष्ट संदर्भ में, एक विशिष्ट समाज में, उसके नारी होने का कारण है । अपने घर-परिवार की प्रतिबद्धता के कारण सुषमा को न चाहते हुए भी अविवाहित रहने के विकल्प को अंगीकृत करना पड़ता है । हमारे समाज में स्त्री विवाहित होने पर वर-पक्ष के परिवार की हो जाती है । उसकी तमाम बातों पर वरपक्ष का अधिकार हो जाता है । स्त्री यदि शिक्षित है और वह नौकरी करती है तो विवाह हे पश्चात वह नौकरी करेगी या नही करेगी ? उसका आधार उसके वरपक्ष के परिवार पर रहता है । यदि वे चाहें तो उसे नौकरी करने दें और यदि न चाहें तो नौकरी छुडवा भी सकते हैं । विवाहित स्त्री यदि नौकरी करती है तो उसकी आमदनी पर वरपक्ष का अधिकार होता है । अतः उषा प्रियंवदा के उपर्युक्त उपन्यास में सुषमा की जो मनोवैज्ञानिक समस्या है, उसका उत्स उसकी जैविक स्थितिमें है, उसके नारी होने में है । सुषमा अपने घर की सब से बड़ी बेटी है । पिता अपाहिज है । परिवार पूर्णतया सुषमा पर निर्भर है। एसी स्थिति में सुषमा यदि विवाह कर लेती है तो उसके परिवार को भूखों मरना पड़ सकता है ? यद्यपि नील सुषमा

से कहता है कि विवाह के उपरान्त भी नौकरी करते हुए वह अपने घर-परिवार का पालन-पोषण कर सकती है । किन्तु सुषमा को यह भलीभाँति ज्ञात है कि नील का ऐसा कहना केवल भावावेग के कारण है । भावावेग के प्रथम उबाल के शमन के साथ ही समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं । यह सुषमा अपने समाज-जीवन के अनुभव से भलीभाँति जानती है । कभी हमारे समाज में यह स्थिति नहीं आई है कि स्त्री विवाह के उपरान्त भी अपने माता-पिता के परिवार को आर्थिक सहायता पहुँचाती रहे । सुषमा यदि पुरुष होती तो जिन मनोवैज्ञानिक समस्याओं से, जिन द्वन्द्वों से उसे गुजरना पड़ रहा है उनसे गुजरना न पड़ता । वह विवाह करके अपने घर-परिवार को पाल सकता है । कॉलेज में सुषमा और नील के सम्बन्धों को लेकर जो उहापोह होता है, वह भी उसके नारी होने के कारण है । हमारे समाज में चरित्र को लेकर नारी की ही अधिक बदनामी होती है । यदि कोई पुरुष स्त्री को छोड़ देता है तो उसकी उतनी बदनामी नहीं होती । ऐसे पुरुष को इस सबब किसी संस्था से नहीं निकाला जाता । किन्तु उसके स्थान पर यदि कोई स्त्री होती है तो उसे लेकर तरह-तरह की बातें बनायी जाती हैं । पति-परित्यकता स्त्री की हमारे समाज में कोई आबरू नहीं है । लोग स्त्री के चरित्र में ही लाँछन लगाते हैं । उसके पतिने उसे छोड़ दी है तो अवश्य ही उस स्त्री में ही कोई दोष होगा । ऐसा मान लिया जाता है।

जैनेन्द्र कुमार द्वारा प्रणीत 'त्यागपत्र' उसका एक ज्वलंत उदाहरण है । इस उपन्यास में मृणाल का विवाह एक उम्र में बड़े दुहाजू व्यक्ति से किया जाता है । इस अनमेल विवाह के पीछे जो कारण संकेतित किया गया है, वह यह है कि मृणाल अपनी सहेली शीला के भाई को प्यार करती थी । उपन्यास में इस बात के पर्याप्त संकेत मिलते हैं कि मृणाल का यह प्रेम केवल मानसिक धरातल पर है । उनके बीच कोई शारीरिक सबंध नहीं है । यह 'प्लेटोनिक' प्रकार का प्रेम है । केवल इतनी-सी बात कि कितनी बडी सज़ा मृणाल को

भुगतनी पड़ती है, कितनी बड़ी क़ीमत उसे चुकानी पड़ती है । मृणाल का पति उम्र मै तो बड़ा है ही, किन्तु भयंकर रूपसे जड़, शंकालु और क्रूर या निर्दयी है । वह अनेक बार मृणाल को चाबूकों से मारता-पीटता भी है । उसके साथ गाली-गलौच करता है ।

यहाँ विचारणीय मुद्दा यह है कि यदि कोई पुरुष विवाह पूर्व किसी को प्रेम करता है, तो क्या समाज में उसकी यही परीणति होती है। विवाह पूर्व प्रेम होने मात्र से उसे अयोग्य पात्र से विवाह नहीं करना पड़ता । उसके लिए तो एक से एक अच्छी लड़कियाँ मिल जातीं । हमारे समाज में नारी की जो स्थिति है उसके कारण एसा होता है । पुरुष की गणना ताँबा-पित्तल के बर्तनो में होती है, जिनको माँजकर पुनः पवित्र किया जा सकता है । दूसरी ओर स्त्रियों की गणना मिट्टी की भाँडों से होती है, जिनके अपवित्र हो जाने पर उनको तोड़फोड़ दिया जाता है, नष्ट कर दिया जााता है । अतः कह सकते हैं कि मृणाल की समस्याओं के पीछे उसकी जैविक स्थिति भी कारणभूत है ।

बाद में केवल एक छोटी सी बात को लेकर मृणाल का पति जब उसे छोड़ देता है, तब भी समाज के लोग उसके पति को लाँछित नहीं करते । उपन्यास में ऐसे अनेक प्रसंग आये हैं, जिन में अन्य पात्रों के कथोपकथनों से यह प्रमाणित हुआ है कि मृणाल बहुत ही सरल, उदार, दयावान और भली औरत है । बनिये द्वारा छोड़ दिये जाने पर वह एक स्कूल में नौकरी करती हैं और साथ ही सम्भ्रान्त परीवार में बच्चों को ट्युशन भी देती है । प्रमोद जब पूछता है कि क्या मास्टरनी अच्छा पढ़ाती है ? तो उसके जवाब में गृह-स्वामिनी की यह टिप्पणी है - ''हाँ, भली औरत है । गरीबनी है । अच्छा बोलती-बतलाती है और संतोषन भी है । . . . हमारे हाथ का काम बँटा लेती है, तो उसका मन भी बहल जाता है । और हमें भी सहारा होता है ।

अच्छी लड़की है । बात का बुरा नहीं मानती ।''[१]

किन्तु इसी गृहस्वामिनी को जब ज्ञात होता है कि मास्टरनी प्रमोद की बुआ है और तब उससे जुड़ा इतिहास कि उसे उसके पति ने छोड़ दिया है, सामने आ जाता है । ऐसी स्थितिमें वही 'भली', 'गरीबनी' और 'संतोषन' औरत एक बदमाश और कुल्टा हो जाती है । और इसके कारण ही प्रमोद की राजनंदिनी से सगाई होते-होते टूट जाती है । यहाँ पर कोई भी व्यक्ति यह सोचने की जहमत नहीं लेता कि मृणाल की जो स्थिति है, उसके पीछे उसके पति का भी कोई दोष हो सकता है, उसका पति भी खराब और अयोग्य हो सकता है । किन्तु हमारे समाज के लोग ऐसी स्थिति में दोष की सारी टोकरी नारी के सिर पर ही रख देता है, उसको ही खराब पतिता और कलंकिनी समझा जाता है। पुरुष तो दूध का धोया हुआ होता है । वह तो खराब, दुष्ट या बदचलन हो ही नहीं सकता ।

यहाँ तक कि स्त्री जब बलात्कृत होती है, तब भी उसके साथ सहानुभूति या हमदर्दी के स्थान पर एक दूसरे ही दृष्टिकोण से उसे देखा जाता है । बलात्कार करनेवाले पुरुष को कानून से सजा मिले तो मिले, समाज से उसे कोई खास सजा नहीं मिलती । यह परापूर्व से चल रहा है । इन्द्र द्वारा बलात्कृत होने पर गौतम ऋषि निर्दोष अहल्या को शाप देते हैं । समाज में प्रायः लोग ऐसा समझते हैं कि जिस नारी या लड़की का बलात्कार हुआ है वही बदचलन होनी चाहिए, या उसमें ही कहीं खोट होनी चाहिए । कृष्णा सोबती कृत 'सूरजमुखी अंधेरे' कि रत्तिका को जो मानसिक आघात पहुँचता है उसमें उसकी यही जैविक स्थिति उत्तरदायी है । वस्तुतः स्त्री और पुरुष की जैविक स्थिति ही भिन्न-भिन्न प्रकार की है । स्त्री पर बलात्कार हो सकता है, पुरुष को बलात्कृत नहीं किया जा सकता । कुछ वर्ष पूर्व गुजरात के वलसाड़

जिले का एक किस्सा अखबारों में आया था जिसमें चार लड़कियों ने मिलकर एक लड़के को बलात्कृत किया था । किन्तु यहाँ एक बात सत्य है कि स्त्री-पुरुष के शारीरिक सम्बन्धों के लिए पुरुष के जनन अवयव का उत्थान (erection) आवश्यक है । अतः पुरुष में यदि कामेच्छा होती है तो ही वह सम्भव हो सकता है, जबकि स्त्री के साथ ऐसा नहीं है । अनिच्छा होने पर भी उसे बलात्कृत किया जा सकता है । यह जैविक स्थिति के अंतर के कारण है । 'सूरजमुखी अंधेरे' की रक्तिका इस आघात से जल्दी से मुक्त नहीं हो पाती, दूसरी ओर मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'इदन्नमम' की मंदाकिनी अपने साथ हुई ऐसी घटना को विस्मृत कर जाती है, यद्यपि वहाँ भी उसे उस स्थिति से मुक्त होने में कुछ तो समय लगता है । किन्तु रक्तिका और मंदाकिनी के सामाजिक परिवेश भी भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं । रक्तिका नगरीय जीवन के सम्भ्रान्त अभिजात वर्ग से जुड़ी हुई है, जबकि मंदाकिनी बुन्देलखण्ड के ग्रामीण क्षेत्र और अनाभिजात वर्ग से जुड़ी हुई है ।

५:०२:०६ सांस्कृतिक मान्यताओं के संदर्भ में :

प्रत्येक देश या समाज की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति होती है । साहित्य और कलाएँ सभ्यता का निर्माण करती है और उसीके आधार पर संस्कृति का निर्माण होता है । हमारी संस्कृति में त्याग, बलिदान, अहिंसा, क्षमा आदि की महत्व शुरू से ही रहा है । हमारा देहात्मवादी आचार्य भी 'ऋणं कृत्वा धृतं पिबेत' कहता है, यदि पश्चिम का कोई आचार्य होता तो कहता - 'ऋणं कृत्वां सुरां पिबेत' । यही अंतर है प्राच्य और पाश्चात्य संस्कृतियों का । एक बार किसीने अमेरिका में स्वामी विवेकानंद से प्रश्न किया कि हमारी संस्कृति और आपकी संस्कृति में क्या अंतर है ? स्वामीजीने उत्तर दिया था कि आपकी संस्कृतिमें अपनी माँ और बहन को छोडकर शेष स्त्रियों को एक

ही दृष्टि से देखा जाता है, हमारे यहाँ पत्नी को छोडकर सभी स्त्रियों को माँ-बहन या बेटी के रूपमें देखा जाता है । संस्कृति का प्रभाव सामाजिक रीतिरिवाजों और मान्यताओं पर भी पड़ता है ।

आर्यों के आगमन के बाद की भारतीय संस्कृति पुरुषसत्ताक रही है । अतः उसकी मान्यताओं के केन्द्र में भी पुरुषसत्ताक समाज़ की मनोवृत्ति रही है । हमारे यहाँ 'विधवा' शब्द तो प्राचीनकाल से मिलता है किन्तु 'विधुर' शब्द पिछले सो-डेढ़ सौ वर्षों में ही मिलता है । यह पुरुषसत्ताक मनोवृति के कारण हुआ है । विधवा शब्द मिलता है क्योंकि परापूर्व से विधवाओं का अस्तित्व रहा है । दूसरी ओर विधुर शब्द नहीं मिलता था क्योंकि पुरुष के जीवन में ऐसी स्थिति का निर्माण ही नहीं होता था । इसका अर्थ यह कतई नहीं कि पुरुष की पत्नियों का निधन नहीं होता था । पत्नियों का निधन होता था, किन्तु निधन के कुछ ही दिनो में पुरुष विवाह करके पुनः गृहस्थ जीवन व्यतीत करने लगता था । समाज में विधवाओं की स्थिति बहुत दयनीय होती थी । उन्हें संयम-नियम का पालन करना पडता था । सभी शुभ कार्यों से उन्हें अलग रक्खा जाता था । किसी शुभ कार्य पर जाते हुए या यात्रा पर जाते हुए यदि कोई विधवा सामने पड़ जाय तो उसे अशुभ माना जाता था । इन सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण व्यक्ति जीवन में अनेक मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का निर्माण होता है । मुंशी प्रेमचन्द कृत उपन्यास 'निर्मला' में निर्मला की ननद विधवा है । उसने जीवन में कोई सुख नहीं देखा है । वह सदा पराधीन रही है । अतः उसका स्वभाव कठोर और कर्कश हो गया है । निर्मला के प्रति भी उसके मन में कोई सहानुभूति नहीं दिखती है । उसमें परपीड़क मनोग्रंथि का निर्माण हुआ है । यह सामाजिक मान्यताओं के कारण हुआ है । हमारे यहां नवजागरण के पूर्व विधवा विवाह को पाप समझा जाता था । अतः ऊँची जातियों में भी विधवाओं के विवाह नहीं होते थे । उन्हें घुटघुट कर मरना

पड़ता था । परिणामस्वरूप ऐसी व्यक्तियों में मनोदमन के कारण परपीडक (Sadist) ग्रंथि निर्मित होती है । यदि उसका पुनर्विवाह हो जाता तो ऐसी स्थिति न आती ।

प्रेमचन्द कृत 'ग़बन' में जालपा को एक प्रकार से अलंकारों का ओब्शेसन है । वह अलंकारों के पीछे पागल है । भारतीय स्त्री के मन में अलंकारों के प्रति यह जो आकर्षण है वह सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण है । हमारे पुरूषसत्ताक समाज में स्त्री को कभी पुरुष की संपत्तिमें हिस्सा नहीं मिलता था । स्त्री को सभी अवस्थाओ में दूसरों पर निर्भर रहना होता था । बाल्यावस्था में पिता या बड़े भाई पर, युवावस्था में पति पर, और वृद्धावस्था में उसे बेटों पर निर्भर रहना होता है । शारदा एक्ट के बाद उसमें कुछ परिवर्तन आया है, परन्तु पुरानी सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण जो आमूलचून परिवर्तन होना चाहिए वह संभव नहीं हुआ है । संपत्ति में अधिकार न होने के कारण ही अलंकार और गहनों के प्रति उसका आकर्षण रहता है, कयोंकि संकट के समय में स्त्री के पास उनका ही एक मात्र आधार होता है ।

बदलती हुई सभ्यताओं के साथ कई बार सांस्कृतिक मान्यताओं में परिवर्तन आता है । उत्तर वैदिक काल से हिन्दू लोग या हिन्दू प्रजा 'गोमांस' को वर्ज्य समझती रही है । गोमाँस वर्जित है, इतना ही नहीं गोमांस का भक्षण पाप समझा जाता है । परन्तु वैदिक युग में गोमांस खाया जाता था । उसका प्रमाण हमें साहित्य में ही मिलता है । वैदिक काल में अतिथि के लिए एक शब्द मिलता है - "गोध्न।" इस शब्द का अर्थ होता है अतिथि । अर्थात अतिथि उसको कहा जाता था जिसके आगमन पर गो अर्थात गाय का वध किया जाता था और उसका माँस अतिथि को खिलाया जाता था । इस प्रकार वैदिक काल में गोमांस-भक्षण वर्जित नहीं था, बल्कि उसे श्रेष्ठ समझा जाता

था। क्योंकि अतिथियों के सम्मुख श्रेष्ठ भोजन को प्रस्तुत करना यह भी हमारी प्रवृति रही है किन्तु उत्तर वैदिक काल में यह मान्यता बदल गयी। वैदिक काल में स्त्रियों को शिक्षा का अधिकार था। उसका विवाह उचित अवस्था में, अर्थात् उसके युवा होने पर किया जाता था। उसे अपने पति के वरण की भी स्वतंत्रता थी किन्तु उत्तर वैदिक कालमें मान्यताएँ बदलती गई और स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आती गई। उत्तर वैदिक काल में यह मान्यता बलवती होती गई कि लड़की यदि रजस्वला हो जाती है, तो उसके बाद जितने भी दिन वह माँ-बाप के यहाँ अविवाहित अवस्था में रहती है; माँ-बाप के पाप की गठरी उसी अनुपात में बढ़ती जाती है। अतः बालिका-विवाह होते थे। जिसके भयंकर दुष्परिणाम भारतीय समाज ने भुगते हैं।

मनुष्य के चिंतन का, उसकी सोच का बहुत कुछ आधार सांस्कृतिक मान्यताओं पर निर्भर करता है। निर्मल वर्मा कृत 'वे दिन' उपन्यास की नायिका रायना एक पति-परित्यक्ता स्त्री है। उसके पति जाक ने उसे छोड़ दिया है। किन्तु जाक के प्रति रायना के मनमें किसी प्रकार का दुर्भाव नहीं है। पति-पत्नी न रहते हुए भी वे अच्छे दोस्त हैं। ऐसा क्यों संभव हुआ ? वस्तुतः पश्चिम की संस्कृति वैयक्तिक स्वतंत्रता पर अधिक बल देती है। हमारे यहाँ स्त्री की पवित्रता का पूरा दारोमदार केवल शारीरिक पवित्रता तक सीमित है। हमारे यहाँ कोई स्त्री यदि दूसरे पुरुष से सम्बन्ध बाँधती है, या दूसरे पुरुष से उसका सम्बन्ध होता है तो सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण उसमें एक प्रकार की हीनताग्रंथि का विकास होता है। दूसरे पुरुष या समाज उसको बुरा समझे, दुष्चरित्र समझे, जूठी समझे उसके पूर्व वह स्वयं ऐसा समझने लगती है। केवल इन्हीं सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण कई बार यदि कोई लडकी बलात्कृत होती है तो जिन्दगीभर उस अपराधबोध को ढोते हुए घुट-घुट कर वह जीती है। वस्तुतः उसमें उसका कोई दोष नहीं होता है, फिर भी अपराधबोध के

कारण उसमें एक प्रकार की हीनताग्रंथि आ जाती है । कृष्णा सोबती कृत 'सूरजमुखी अंधेरे के' की रत्ती की जो मनोवैज्ञानिक समस्या है उसके मूलमें इसी प्रकार की धारणा है ।

'वे दिन' की रायना इस प्रकार की ग्रंथियों से मुक्त है, क्योंकि सांस्कृतिक मान्यताओं के तहत ही चेतनमन की धारणाएँ बनती हैं । पश्चिमी संस्कृति के कारण वह एक प्रकार के उन्मुक्त समाज में जीती है । फलतः उसमें वे ग्रंथियाँ और अपराधबोध नहीं है जो भारतीय संस्कृति में पली-बढ़ी लड़कियों में होते हैं ।

हमारे समाज के तथाकथित शुद्धतावादी (puritian) ऐसी स्त्री को कुल्टा भी कह सकते हैं । परन्तु वियेना में रायना के बारे में लोगों की धारणा इस प्रकार की नहीं है । वहाँ का समाज, उसका मित्र मंडल उसे निहायत, प्रमाणिक और निष्ठावान मानते हैं । वह जब तक जाक के साथ थी उसकी संपूर्ण ईमानदारी जाक के साथ जुड़ी हुई थी । अब जाक से अलग है । दूसरा विवाह नहीं किया है । स्वतंत्र है किन्तु उसकी इस स्वतंत्रता को वहाँ का समाज बुरी निगाह से नहीं देखता है । वीक-एण्ड अथवा छुट्टियों में जब वह दूसरे शहरो में जाती है तो वह अपना कोई मनपसंद साथी ढूंढ लेती है और उसके साथ राग-रंग मनाती है । परन्तु इसे वह अपना एक अधिकार समझती है - चयन का अधिकार । वह जिसे पसन्द करती है, चाहती है उसे अपना शरीर देती है । उसमें किसी प्रकार का अपराधबोध या पापभावना बीचमें नहीं आती । ऐसा हो सका है क्योंकि वहाँ की सांस्कृतिक मान्यताएँ भिन्न प्रकार की हैं । वहाँ स्त्री को मिट्टी का बरतन नहीं समझा जाता । वहाँ स्त्री और पुरुष दोनों के चरित्र स्टील के बरतन की तरह हैं, जिन को धो-माँजकर पुनः स्वच्छ या पवित्र बनाया जा सकता है ।

ठीक इसके विपरीत भारतीय वातावरण में तथाकथित अभिजात वर्ग में कई बार कुछ एसी महिलाएँ पायी जाती हैं, जिनके पतीतर सम्बन्ध होते हैं। पर उनकी चेतना के किसी स्तर पर पापभावना या हीनता बोध अवश्य होता है। शैलेश मटियानी कृत 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई' की नायिका सेठानी नर्मदाबेन ऐसी ही एक नायिका है। सेठ नगीनभाई वयोवृद्ध है, सेठानी युवान। अतः अपनी यौनक्षुधा की तृप्ति के लिए वे कुछ रास्ते तलाश लेती हैं। सेठ नगीनभाई भी इससे अबगत हैं। नर्मदाबेन के पास तो एक न्यायिक कारण है कि नगीनभाई वृद्ध है और उनकी यौनेच्छा को तृप्त नहीं कर सकते। युवान सेठानी के साथ विवाह करके वस्तुतः एक प्रकार का सामाजिक अपराध उन्होंने किया है। अतः सच पूछा जोय तो सेठानी में किसी प्रकार की हीनभावना या पापभावना नहीं होनी चाहिए। तथापि हम उपन्यास में पाते हैं कि अनेक स्थानों पर सेठानी नर्मदाबेन अनेक अपराध बोध से ग्रस्त प्रतीत होती है। यह सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण है। हमारी संस्कृति, जिसे आर्य संस्कृति कहा गया है, स्त्री पुरुष की समानता को उस प्रकार की तवज्जो नहीं देती है जो पश्चिमी संस्कृति में उपलब्ध होती है। यदि हम प्राचीन भारतीय संस्कृति का अध्ययन करें तो ज्ञात होगा कि हमारे यहाँ जो मातृसत्ताक संस्कृति थी उसमें स्त्री का वर्चस्व अधिक था। मातृसत्ताक संस्कृति वाले समाज में बहु पतिविवाह पद्धति भी पायी जाती है। महाभारत कालीन द्रौपदी, पाँच पाँच पतियों के रहते हुए भी कुंठामुक्त है। उस समाजने द्रौपदी की गणना भी सती-साध्वी स्त्रियों में की है। द्रौपदी तमाम प्रकार की कुंठाओं से मुक्त पायी जाती है। यह भी सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण हो पाया है।

ममता कालिया द्वारा लिखित 'बेघर' उपन्यास के नायक परमजीत की जो मानसिक कुंठा है, उसका कारण भी सांस्कृतिक मान्यताओं पर आधारित है। हमारे यहाँ यौनशुचिता पर अधिक जोर दिया गया है। विवाह पूर्व पुरुष

के अन्य लड़कियों से संबंध हो तो उस पर हमारा समाज आँख आड़ों कान करता है। परन्तु यही समाज यह कतई नहीं चाहता कि विवाह से पूर्व लड़की का किसी से सम्बन्ध हो। बाकायदा इस कौमार्यपन की परीक्षा होती है, जाँच पड़ताल होती है । कुछ अरब देशो में तो यह प्रथा है कि सुहागरात्रि के दिन वरपक्ष के रिश्तेदार शयनकक्ष के बाहर ठहरते हैं। सहशयन के पश्चात जैसे ही नववधू का पति बाहर आता है, वे लोग शयनकक्ष की ओर दौड़ पड़ते है और सेज पर रक्त के धब्बों को देखकर नाचने-कूदने लगते हैं। वस्तुतः यह मान्यता अंधविश्वासों पर आधारित है। कुमारीपटल का क्षत या अक्षत होना कौमार्य-अकौमार्य को निश्चित नहीं कर सकता। यह उस बर्बर युग की मान्यता है जब बालिका अवस्था में ही लड़कियों का विवाह होता था और सुहागरात्रि के नाम पर उन पर पाशवी अत्याचार होता था। अब यदि किसी लड़की का विवाह चौबीस-पच्चीस वर्ष में होता है तो उससे कुमारीपटल के अक्षत होने की अपेक्षा नहीं रखी जा सकती। संभोगेतर कारणों से भी कुमारी पटल क्षत हो सकता है। 'बेघर' उपन्यास का नायक उपर्युक्त गलतफहमी में था। प्रथम संभोग में जब संजीवनी को रक्तस्राव नहीं होता तो उसके शंकाशील मनमें यह कुंठा घर कर जाती है कि उसकी पत्नी संजीवनी का कौमार्य अक्षत नहीं है। विवाह पूर्व उसके जीवन में जरूर कोई अन्य पुरुष आया होगा और शंका का कीड़ा जब एक बार दाम्पत्य के वृक्ष को लग जाता है तो उसे खोखला करके ही छोड़ता है। परमजीत-संजीवनी का दाम्पत्य जीवन बिगड़ता ही चला जाता है और अन्ततः वह संजीवनी को तलाक देता है। इस प्रकार सांस्कृतिक मान्यताओं से उत्पन्न कुंठाओं के कारण उभय (दोनों) का जीवन नरकतुल्य हो जाता है।

शशीप्रभा शास्त्री कृत 'सीढ़ियाँ' उपन्यास की नायिका मनीषी की जो समस्या है वह भी सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण उत्पन्न कुंठा है। मनीषी एक विधवा स्त्री थी। किन्तु पढ़-लिखकर वह डॉक्टर हो जाती है। सुपर्णा

उसकी सहेली है । मरते समय सुपर्णा अपने बेटे सुकेत को मनीषी के हवाले कर देती है । अतः वह सुकेत को बेहद प्यार करने लगती है । सुकेत भी मनीषी को चाहने लगता है । किन्तु शुरुमें सुकेत मनीषी को मौसी कहता था । दोनों के प्रेम में यह सम्बन्ध एक बहुत बड़ी ग्रंथि पैदा करता है । पश्चिमी परिवेश में इस प्रकार के विवाह एक सामान्य बात है । परन्तु भारतीय परिवेश में सांस्कृतिक मान्यताएँ बीच में आती हैं । मनीषी सुकेत की सगी मौसी नहीं है । सुकेत की माँ की सहेली है । समस्या केवल यह है कि सुकेत उसे मौसी कहता था । मनीषी सुशिक्षित है, डॉक्टर है, दक्यानुसी विचारों से दूर है, फिर भी समाज की बेड़ियों को तोडने का साहस वह नहीं दिखा पाती । सुकेत मनीषी के सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है । वह युरोपीय समाज के कई उदाहरण भी रखता है । एक बार तो वह अखबार का कटिंग भी दिखाता है, जिसमें वियेना की एक पैंतालीस वर्षीय महिला तेबीस वर्ष के युवक के साथ विवाह करती है । तब मनीषी सुकेत को कहती है कि यह वियेना नहीं भारत है और भारतीय समाज में इस प्रकार के विवाह को कोई भी स्वस्थ दृष्टिसे नहीं देखता है ।[१०] सुकेत शारदा से विवाह कर लेता है । उसमें तीन जिन्दगियाँ बरबाद होती हैं - मनीषी, सुकेत और शारदा की । वस्तुतः मनीषी सुकेत से विवाह करने का साहस नहीं जुटा पाती और इस कारण वह कुंठाग्रस्त रहने लगती है, इन सबके पीछे सांस्कृतिक मान्यताएँ उत्तरदायीं हैं ।

५:०२:०७ यौन समस्याएँ :

मनुष्य के जीवन में सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक समस्याएँ ही होती है; ऐसा नहीं है । कई बार व्यक्ति हर तरह से सुखी होते हुए भी उसे अनेक प्रकार की सांसारिक यातनाओं से गुजरना पड़ता है । इन यातनाओं के पीछे यौन समस्याएँ कारणभूत होती हैं । जिन समस्याओं का सम्बन्ध व्यक्ति की

कामवासना (sex) से होता है, उनको हम यौन समस्याओं के अंतर्गत रख सकते हैं । ऊपर सांस्कृतिक मान्यताओं के संदर्भ में 'बेधर' उपन्यास का जो उल्लेख किया है उसमें परमजीत और संजीवनी का जीवन बरबाद होता है यौन समस्या के कारण । उनके जीवन में कोई सामाजिक-पारिवारिक समस्या नहीं है, क्योंकि परमजीत के परिवार में वह अकेला है । माँ-बहन नहीं है । पिता भी नहीं है । अतः सामाजिक-पारिवारिक समस्या का प्रश्न नहीं उठता है । परमजीत व्यापारी है । अच्छा-खासा कमा लेता है । संजीवनी भी नौकरी करती है । अतः कोई आर्थिक समस्या नहीं है । इन दोनों के जीवन में जो भूचाल आता है उसके मूलमें परमजीत का यौन-विषयक अज्ञान ही कारणभूत है । परमजीत की समस्या का उल्लेख पूर्ववर्ती पृष्ठों में किया जा चुका है ।

पुरुष पात्रो में यौन समस्या कई बार नपुंसकता को लेकर होती है । यह नपुंसकता दो प्रकार की होती है - नैसर्गिक और पारिस्थितिक । नौसर्गिक नपुंसकता लाईलाज होती है । भगवतीचरण वर्मा कृत उपन्यास 'रेखा' का शिवेन्द्र धीर नैसर्गिक दृष्टिसे नपुंसक है । शिवेन्द्र धीर का बाहरी व्यक्तित्व, शारीरिक गठन इस प्रकार का है कि उसे देखते हुए कोई नहीं कह सकता कि ऐसे आकर्षक व्यक्तित्व का मालिक नपुंसक हो सकता है ।[११] विपरीत इसके कई बार ऐसे लोग पाये जाते है जिनमें स्त्रैण व्यक्तित्व होता है, चालढ़ाल भी स्त्रियों जैसी होती है, बोलने का लहजा भी स्त्रियों जैसा होता है । परन्तु इस प्रकर के लोगो में नपुंसकता लेश मात्र को भी नहीं होती । डॉ. रामदरश मिश्र कृत उपन्यास 'जल टूटता हुआ' का दलसिंगार मउगा उस प्रकार का व्यक्ति है । 'मउगा' शब्द का अर्थ ही हिजड़ा होता है । गुजराती में एसे लोगों के लिए 'बाया' शब्द का प्रयोग होता है । ऐसे लोगों को कंपनी भी स्त्रियों की ही अच्छी लगती है । स्त्री-मंडली में बैठकर लम्बे-लम्बे हाथ करके बातें करने में उनको विशेष आनंद आता है । दलसिंगार भी उसी प्रकार का व्यक्ति है ।

उसमें किसी भी प्रकार की जातीय कमजोरी नहीं पायी जाती, बल्कि डलवा जैसी विपुलवासनावती (Nympho) स्त्री को संतुष्ट करने की कुव्वत पूरे गाँव में वही एक रखता है ।[१२]

जहाँ शिवेन्द्र धीर की नपुंसकता नैसर्गिक है, वहाँ इसी उपन्यास के प्रोफेसर प्रभाशंकर तथा राजकमल चौधरी कृत उपन्यास 'मछली मरी हुई' के निर्मल पदमावत की नपुंसकता पारिस्थितिक है । डॉ. प्रभाशंकर की नपुंसकता के पीछे कामकुंठा को लेकर उनकी अपनी लघुताग्रंथि है । पत्नी रेखा तथा प्रोफेसर प्रभाशंकर में लगभग बीस-पचीस वर्ष का अंतर है । इस अवस्था के कारण प्रोफेसर में एक प्रकार की ग्रंथि विकसित होती है और वे बराबर महसूस करते हैं कि अपनी युवा पत्नी को संतुष्ट करने के लिए सक्षम नहीं है। इसके पीछे और भी दो कारण है । एक तो प्रोफेसर अपने युवानी के वर्षो में अत्यधिक वासनायुक्त जीवन जी चुके हैं । अनेक स्त्रियों से उनके सम्बन्ध रहे हैं । और वे सोचते है कि अपनी उर्जा का वे आवश्यकता से अधिक उपयोग कर चुके हैं । यौन-विज्ञान की उपयुक्त जानकारी न होने कारण उनके मनमें यह विश्वास बैठ गया है कि जवानी के दिनो में जवानी के अनगिनत चैक काट चुके हैं और अब उनकी जवानी के खाते का बैलैन्स 'निल' हो गया है । जबकि यह वैज्ञानिक तथ्य नहीं है । रेखा के समक्ष नपुंसकता महसूस करने का दूसरा कारण रेखा का विपथगामी होना है । रेखा के अन्य पुरुषों से सम्बन्ध जब प्रोफेसर के सम्मुख जाहिर हो जाते हैं उसके बाद नपुंसकता की भावना प्रोफेसर में अनेक गुना बढ़ जाती है । यह नपुंसकता पारिस्थितिक है। क्योंकि यही प्रोफेसर अपनी समवयस्का मिसेस रत्ना चावला के साथ सफलतापूर्वक यौन सहवास कर सकते है ।[१३] विदेशो में तो ऐसे पारिस्थितिक नपुंसको को Normal बनाने के कार्यो में कुछ महिलाएँ दक्ष होती है । वे अन्य डॉक्टर की तरह बाकायदा प्रेक्टिस करती हैं और ऐसे लोगों में पुनः

पुंसकता लाने का कार्य करती हैं ।

'मछली मरी हुई' के निर्मल पदमावत में भी इसी प्रकार की नपुंसकता है । कल्याणी के साथ जब वह एक हॉटल में सहशयन के लिए उद्यत होता है तब अचानक हाडपिंजर के देख लेने से उसका लैंगिक तनाव समाप्त हो जाता है । वह बेड़ की पटरी पकड़कर बैठ जाता है । उस समय पद्मावत की पत्नी होती या कोई और समझदार स्त्री होती तो वह उस स्थिति को संभाल ले जाती । मनुष्य अनेक स्तरों पर जीता है । वह केवल शरीर नहीं है । मन और आत्मा भी है । एक ही व्यक्ति जातीयता की दृष्टिसे अलग-अलग क्षणों में अलग-अलग प्रकार की अनुभूति करता है । जो व्यक्ति किसी क्षण में स्वयं को शारीरिक दृष्टि से बहुत मजबूत या स्ट्रोंग समझता है, वही किसी दूसरे क्षण में शारीरिक कमजोरी भी महसूस कर सकता है । सब स्थितियों पर निर्भर है । ऐसी स्थिति में यदि स्त्री प्रेमपूर्ण संवेदना से काम लेती है तो उसका अच्छा प्रभाव पुरुष पर पड़ता है । विपरीत इसके यदि कोई स्त्री पुरुष की ऐसी कमजोरी के क्षणों में उसका तिरस्कार करती है, घृणा करती या उसके प्रति व्यंग्य या कटाक्ष करती है तो उसका विपरीत प्रभाव पुरुष के मन पर पड़ता है । निर्मल पद्मावत के साथ भी यही होता है । कल्याणी उसे तिरस्कृत करती है, उसे नरक का कीड़ा कहती है । परिणामस्वरूप निर्मल जो अच्छा खासा पुरुष था नपुंसक हो जाता है । निर्मल की यह नपुंसकता पारिस्थितिक है ।[१४] बाद में उपयुक्त अवसर मिलने पर उसकी नपुंसकता दूर हो जाती है । संप्रति गुजराती दैनिक संदेश में एक समाचार प्रकाशित हुआ था जिसमें किसी वेश्या के किसी पुरुष को नामर्द कहने पर उसकी उलटी प्रतिक्रिया उस व्यक्ति में हुई थी । इसके कारण वह अनेक लड़कियों और स्त्रियों को बलात्कृत करता है ।[१५]

पुरुषो में जिस प्रकार नपुंसकता की समस्या पायी जाती है, ठीक उसी प्रकार की समस्या तो स्त्रियों में नहीं हो सकती, क्योंकि जहाँ तक स्त्री पुरुष के

समागम का प्रश्न है वह प्रधानतया पुरुष निर्भर है । स्त्री पर अनचाहा समागम हो सकता है, किन्तु यदि पुरुष नैसर्गिक दृष्टि से नपुंसक हो तो किसी स्त्री द्वारा उसे बलात्कृत नहीं किया जा सकता । अतः यह समस्या जितनी पुरुषों की है उतनी स्त्रियों की नहीं होती । स्त्रियों में यह समस्या एक दूसरे रुपमें मिलती है । जिसे स्त्री का ठंडापन (frigidity) कहा जा सकता है । स्त्री यदि यौन दृष्टिसे frigid होती है तो उससे यौन सम्बन्ध तो स्थापित हो सकता है किन्तु उसकी अपनी सक्रियता न होने के कारण वह क्रिया यंत्रवत् हो जाती है । अतः यौनजन्य संतुष्टि उभय में से किसी को भी नहीं होती ।

कृष्णासोबती कृत उपन्यास 'सूरजमुखी अंधेरे' की रत्तिका में फ्रिजीडीटी पायी जाती है । उसके जीवन में कई प्रेमी आते हैं, परन्तु कोई भी प्रेमी उससे यौन सम्बन्ध स्थापित करने में सफल नहीं होता है । यहाँ किसी के मनमें यह प्रश्न उठ सकता है कि जैसा कि ऊपर कहा गया है स्त्री का ठंडापन यौन सम्बन्ध में बाधक नहीं होता है, तो फिर यहाँ ऐसा क्यों होता है । वस्तुतः रत्तिका में गजब का आकर्षण है वह पुरुष प्रेमियों को आकर्षित भी करती है । उसमें खुद में भी यौन इच्छा होती है, परन्तु यौन सम्बन्ध स्थापित करने के ऐन वक्त पर वह बूझ-सी जाती है । उसकी यौनेच्छा मर जाती है । अतः वह मना कर देती है । सामनेवाला व्यक्ति उसका परिचित प्रेमी होने के कारण अनिच्छा होने पर सम्बन्ध नहीं जोड़ता । अन्यथा कोई ऐसी स्त्री के साथ बलात्कार करना चाहे तो कर सकता है । अन्ततः उसकी यह फ्रिजीडीटी दिवाकर नामक एक विवाहित पुरुष के द्वारा टूटती है और वह उसे समर्पित हो जाती है । इस प्रकार रत्तिका एक नोर्मल (Normal) स्त्री बन जाती है । दिवाकर उसे उसकी उस फ्रिजीडीटी से मुक्ति दिलाता है फिर भी वह दिवाकर को छोड़ देती है और जिसने उसका इतना हित किया है, उसका या उसके परिवार का वह अहित नहीं करना चाहती । वह दिवाकर से कहती है - ''मैं जुड़े हुए को नहीं

तोड़ूँगी । विभाजन नहीं करुँगी । मेरी देह अब तुम्हारी प्रार्थना है दिवाकर ।''[१६] रक्तिका एक सुशिक्षित और संस्कारी लड़की है । यदि उसके स्थान पर कोई स्वार्थी, स्वकेन्द्रित और संकीर्ण मनोवृत्ति वाली लड़की होती तो येन केन प्रकारेण वह दिवाकर् को फाँसने का प्रयत्न करती, किन्तु रक्तिका ऐसा नहीं करती ।

यहाँ किसी को प्रश्न हो सकता है कि जिसके जीवन में सोलह पुरुष आये हों उसे संस्कारी किस लिहाज से कहा जा सकता है ? तो उसका उत्तर यह है कि रक्तिका की यह भटकन उसकी असाधारणता (abnormility), उसके ठंडापन (frigidity) के कारण है और जब यह असाधारणता दूर हो जाती है तब वह एक सुसंस्कृत, नोर्मल लड़की की तरह व्यवहार करती है । जो इस प्रकार के नरक से गुजरा हो वही उसको समझ सकता है । यदि वह आवारा किस्म की लड़की होती तो दिवाकर को मुक्त न करती ।

रक्तिका की यह जो यौन समस्या थी, उसके पीछे उसके शैशव काल का एक हादसा था । जब रक्तिता छोटी-सी बच्ची थी तब एक दुराचारी पुरुषने उस अबोध बालिका उपर बलात्कार किया था । इस बलात्कार के कारण रक्तिका हमेशा-हमेशा के लिए यौनेच्छा आकर्षण खो बैठती है । यह दुर्घटना रक्तिका के लिए अभिशाप बन जाती है । अत्यधिक सुन्दरता उसके लिए अभिशाप बन जाती है । अत्यधिक सुन्दरता और स्मार्टनेश के कारण वह पुरुषों को अपनी तरफ खींचती है, परन्तु अन्तिम क्षणों में उसकी फ्रिजीडीटी उस पर हावी हो जाती है और वह उनको छटपटाता हुआ छोड़कर किनारा कर जाती है । उस अमानवीय क्रीडा में उसे आनन्द आता हो ऐसा नहीं है । वस्तुतः शैशवकाल में अवचेतन में पड़ी ग्रंथि के कारण यह सब होता है । यहाँ पर वह उग्र द्वारा प्रणीत 'बुधवा की बेटी' की रधिया से अलग पड़ती है । रधिया भी

पुरुषों को ललचाकर छोड़ देती है । किन्तु ऐसा वह प्रतिशोध की भावना से करती है । रक्तिका में यह प्रतिशोध की भावना नहीं है ।[१७]

उपर्युक्त ठंडेपन की जो यौन समस्या है उसका परिमाण कम ज्यादा के रूपमें अलग अलग स्त्रियों में पाया जाता है । उपर्युक्त उपन्यास 'सूरजमुखी अंधेरे के' की रक्तिका में यह ठंडापन बहुत ज्यादा है । कुछ स्त्रियों में यह ठंडापन होता है, पर वह उतना अधिक नहीं होता । मणि मधुकर कृत उपन्यास 'सफेद मेमने' की बन्नो में भी यह ठंडापन है । बन्नो के ठंडेपन के दो कारण है । वचपन में ही उसके मातापिता सांप्रदायिकता के शिकार हो गये थे । अतः उसका पालन-पोषण मामा-मामी के संरक्षण में हुआ था । मामी सैंतालीस के दंगो की कहानी जिस प्रकार बयान करती थी उसके कारण उसकी यौनेच्छा ठंडी पड़ गयी थी । सैंतालीस के दंगो की वह लोमहर्षक कथा कि किस तरह उसकी माँ कि नंगी देह को आठ-नव जनों ने रौंदा था और किस प्रकार उसके स्तनों की घुंडियों को उतार लिया था और किस प्रकार उनके गुप्तांग में मिर्च का चूरा भर लिया था इसको सुनते ही बन्नो बेहोश हो गई थी और तबसे उसके भीतर का सुखभरा आकर्षण समाप्त हो चुका था ।[१८]

बन्नो के ठंडेपन का दूसरा कारण उसकी मामी स्वयं थी । उसकी मामी भी एक ठंडी औरत होने के कारण बन्नो का संग चाहती थी । बन्नो के साथ उसके समलैंगिक सम्बन्ध थे और यह एक यौन-मनोवैज्ञानिक सत्य है कि लिसबियन स्त्रियाँ शनैः शनैः फ्रिजीडीटी की ओर जाती हैं ।

निरूपमा सेवती के उपन्यास 'पतझड़ की आवाजें' की अनुभा में भी यह ठंडापन कुछ हद तक पाया जाता है । मणी मधुकर के उपन्यास 'सफेद मेमने' की बन्नो ने तो विभाजन के समय की विभीषिकाओं के संदर्भ में सुना था । बन्नो ने जिस प्रकार विभाजन के समय की विभीषिकोओं के संदर्भ में

सुना था, ठीक उसी प्रकार अनुभा ने भी सैंतालीस के दंगो की अमानवीय लोमहर्षक घटनाओं के संदर्भ में काफ़ी कुछ सुन रखा था। पाकिस्तान से भागते हुए रास्ते में मुसलमान आततायी रेल के डिब्बे में घुस जाते हैं और परिवार की छोटी बहू पर अमानुषी बलात्कार करते हैं। अनुभा के भाई ने उसका प्रतिरोध किया था। अतः वे लोग उसके पेट में चाकू भौंक देते हैं। यद्यपि अनुभा उस समय कुछ महीनों की थी और उसने केवल इसके बारे में सुन रखा था, तथापि यह बर्बर, अमानुषी दृश्य उसके अवचेतन के किसी तह में बैठ गया था और जिसके कारण जातीयता के प्रति उसमें एक प्रकार का अनाकर्षण का भाव विकसित हो गया था जिसे यौन मनोविज्ञान की भाषा में हम 'फ्रिजीडिटी' कह सकते हैं। भारत आने पर यदि अनुभा को अच्छा जीवन, अच्छा माहौल मिला होता तो कदाचित शनैः शनैः यह जातीय ठंडापन दूर हो सकता था। किन्तु जीवन के नाम पर अनुभा को मिलते हैं अभाव और संघर्ष। आर्थिक अभावों के कारण उसके परिवार को एक ऐसी गंदी बस्तीमें रहना पड़ता था जिसकी ऊपर की मंजिल पर वेश्याओं का कोठा था। इस गंदे माहौल के कारण उसका वह ठंडापन दूर होने के स्थान पर उलटे बढ़ता है। रमनेश नामक एक युवक से अनुभा को प्रेम भी होता है और सगाई भी होती है, किन्तु वह सगाई टूट जाती है। इसके पीछे भी कारण वह गंदा माहौल है जहाँ अनुभा रहती थी।[१९]

अनुभा जहाँ नौकरी करती है, वहाँ के बोस धीरेन वर्मा के प्रेमपूर्ण व्यवहार से अनुभा को कुछ राहत मिलती है। जीवन के प्रति के उसके दृष्टिकोण में कुछ बदलाव भी आता है। जीवन के प्रति आकर्षण भी जगता है। किन्तु थोड़े ही समय में वे नौकरी छोड़कर व्यवसाय में लग जाते हैं। धीरेन वर्मा के स्थान पर बोस के रूप में अनुभा का ही एक सहकार्यकर सी. के. पदोन्नत होकर आता है। सी. के. अनुभा को पी. एस. का पद ओफर

करता है । किन्तु उसके सामने जो शर्तें रखता है, अनुभा का आत्म-सम्मान उसे स्वीकार नहीं करता । अतः जो प्रमोशन अनुभा को मिलना चाहिए था वह उषा को मिलता है । क्योंकि वह सी. के. की सब माँगो पर खरी उतरती है । उषा मानती है कि जिस व्यक्तिसे अपनी स्वार्थवृद्धि होती हो तो उसके साथ किसी भी सीमा तक अंतरंग होने में कोई अनौचित्य नहीं है । फलतः कामचोर और अकार्यकुशल होते हुए भी वह सी. के. की पर्सनल सेक्रेटरी बन जाती है । वेतन कम होने के बावजूद वह बड़ी-बड़ी पार्टियाँ आयोजित करती है और लोगों को महँगी विलायती शराब पिलाती है । उषा यह सब कर पाती है क्योंकि उसने नैतिकता-अनैतिकता के ख्यालों को छोड़ दिया है । अनुभा के अपने चारों तरफ के माहौल में यही सब गंदकी मिलती है । फलतः उसका ठंडापन दूर होने के स्थान पर बढ़ता जाता है ।[२०] अनुभा को पुरुषों का यह दृष्टिकोण अच्छा नहीं लगता । साथ ही उषा जैसी लड़कियों का व्यवहार भी उसे खटकता है । इस संदर्भ में डॉ. रोहिनी अग्रवाल कामकाजी महिलाओं के संदर्भ में जो टिप्पणी देती है वह बहुत ही सार्थक है - ''कहना अनुचित न होगा कि तमाम जागृति तथा शिक्षा के बावजूद स्त्री को आज भी देह तथा उपभोग की सामग्री समझा जाता है । इसेक लिए निर्विवाद रूपसे दोषी है पुरुष जो क्रेता या विक्रेता के रूप में 'देह' को खरीदता या बेचता है । लेकिन नारी कोई निष्प्राण वस्तु या मूक पशु तो नहीं है जो बिना ची-चूपड़ किये इस हाथ से उस हाथ हस्तांतरित होती रहे । उसका अपना व्यक्तित्व है, सम्मान है, संवेदनाएँ है । अतः दृढ़ता का सम्बल लेकर ऐसे पाशविक कृत्यों का विरोध करना उसका दायित्व है । आत्मरक्षा हेतु यदि वह स्वयं प्रयास नहीं करेगी तो दूसरा कौन उसकी सहायता को आगे आएगा ? स्त्री यदि 'देह' समझी जाती है तो इसका अर्थ है, स्वयं ऐसा समझे जाने की मूक स्वीकृति देना । स्त्री की पारिवारिक प्रतिकूलताओं तथा धनाभावों को विवशता का नाम देकर देह के व्यापार के साथ उसका सम्बन्ध जोड़ना उचित नहीं ।''[२१]

जैसा कि डॉ. रोहिणी अग्रवालने कहा है अनुभा वह दूसरे प्रकार की नारी है जो अपने आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करती है । ऐसी स्थिति में यदि उसे रमनेश का प्रेम और सहानुभूति प्राप्त हुई होती, या फिर धीरेन वर्मा उसके बोस के रूपमें बने रहते और किसी अच्छे स्वस्थ मनोवृत्तिवाले युवक से वह जुड़ती तो कदाचित उसकी यह समस्या दूर हो सकती थी । जीवन में दो पक्ष होते है - उजला और काला । अनुभा को शैशव काल से युवावस्था तक जीवन के काले पक्ष से ही वास्ता पड़ा है । फलतः शैशवकाल से ही उत्पन्न उसकी यह यौन समस्या कालांतर में क्षीण होने के स्थान पर निरंतर पुष्ट और बलवती होती गई है ।

जातीय ठंडापन (frigidity) के विपरीत दूसरी यौन समस्या है जातीय भावना के अतिरेक की समस्या । काम वासना या सेक्स की भावना प्रत्येक सामान्य व्यक्ति में होती है, उसका सामान्य से कम होना भी यौन समस्या है, सामान्य से अधिक होना भी यौन समस्या के अंतर्गत आता है । अंग्रेजी में उसे erotomania कहते हैं । उसकी व्याख्या इस प्रकार दी गई है - "Pursaing an exaggeratedly active sex life is classified as erotomania and a person who indulges in an exaggerated amount of sexual activity is an erotomaniac. There is even a special term for male erotomania, nemely satyriasis, and one for female as nymphomania."[२२] कुछ लोग इसे यौन बीमारी के रूपमें देखते हैं । वस्तुतः वह यौन बीमारी के रुप में देखते हैं । वस्तुतः यह यौन बीमारी नहीं अपितु एक यौन समस्या है या अधिक से अधिक उसे यौन बीमारी का लक्षण कह सकते हैं । इस संदर्भ में डॉ. Inge तथा -Dr. Stanhegeler ने कहा है - "It has also been used as the name of diseses : 'He is suffering from erotomania' – Quite erroneously for after all it is not a disease, but possibly the

symptom of one. Furthermore, what is often symply the case is not incriased sexual urgies, but unsatisfied sexual urgies that have for this reason mounted and mounted without being able to find an out let.''[२३]

वस्तुतः कोई व्यक्ति जन्म से या वंश परंपरागत रूप से erotomaniac नहीं होता, किन्तु किन्हीं कारणों से किसी व्यक्ति विशेष की कामवासना यदि संतुष्ट नहीं होती है, और असंतुष्टि की यह मात्रा निरंतर बढ़ती ही रहती है तब ऐसा व्यक्ति कालांतर में erotomaniac हो सकता है । यह एक यौन समस्या भी है और यौन कुंठा भी है । कृष्णा सोबती के उपन्यास 'मित्रो मरजानी' की मित्रो उर्फ सुमित्रावंती में यह यौन समस्या पायी जाती है । मित्रो में इस समस्या के पाये जाने के दो कारण हैं । उसकी माँ के यहाँ का वातावण यौन दृष्टि से बहुत ही उन्मुक्त कहा जा सकता है । मित्रो की माँ के कई पुरुष प्रेमी थे और मित्रो में अपनी शैशवावस्था या किशोरावस्था में उन यौन विषयक समझदारी समय से कुछ पहले ही आ गई थी । अतः यदि उसकी यौनेच्छाएँ विवाह के उपरान्त उसके पति द्वारा परितुष्ट होतीं तो वह एक सामान्य (Normal) स्त्री के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर सकती थी । परन्तु उसका पति दूसरी स्त्रियों में अधिक रूचि लेता है । बाहर की अनेक स्त्रियों से उसके सम्बन्ध हैं । मित्रो के पास तो वह कभी-कभार, हफ़्ते में एकाध बार आता है । अतः उसकी कामवासना असंतुष्ट रह जाती है जो उसे erotomania की तरफ ले जाती है ।

उपर्युक्त दोनों कारणों का संकेत हमें मित्रो के निम्नलिखित कथन में मिलता है - ''सात नदियों की तारो, तवे-सी काली मेरी माँ और मैं गौरी-चिट्टी उसकी कोख पड़ी । कहती है कि इलाके के बड़भागी तहसीलदार की मुहादरा है मित्रो । अब तुम हीं बताओ जेठानी, तुम जैसा सत-बल कहाँ से

पाऊँ-लाऊँ? देवर तुम्हारा मेरा रोग नहीं पहचानता, बहुत हुआ हप्ते पखवारे . . . . और मेरी इस देह में इतनी प्यास है कि मछली-सी तड़पती हूँ ।''[२४]

राजकमल चौधरी कृत 'मछली मरी हुई' की कल्याणी भी एक निम्फो औरत है । कल्याणी के निम्फो होने के पीछे उसकी जातीय भटकन है । गलत सौबत में पड़ने के कारण वह शराब और ड्रग के रवाड़े चढ़ जाती है । इन चीजों को उपलब्ध करने के लिए वह अपने शरीर को भुनाती है । और इसी यौन भटकन के कारण अंततः वह एक Nimpho औरत हो जाती है ।[२५]

शिवानी कृत उपन्यास 'कृष्णकली' में कृष्णकली की नानी जो नेपाल के राणा की रखैल भी है, इस कोटि में आती है । ऐसी स्त्रियों को हम विपुलवासनावती स्त्रियाँ भी कह सकते हैं । विलासिता के अधिक साधन और यौन उन्मुक्तता किसी भी स्त्री को erotomaniac बना सकता है । यहाँ पर इन्हीं कारणों से कली की नानी मुनीर इस यौन समस्या से पीड़ित रहती है । फलतः अपनी यौन तृप्ति के लिए वह नित्य नवीन शिकोरों की टोह में रहती है । उसकी तीनों बेटियों के पिता अलग-अलग थे । प्रथम पुत्री माणिक राणा की पुत्री थी, द्वितीय पुत्री हीरा लाटसाहब के दामाद के हबसी नौकर रौबी की पुत्री थी, तो तृतीय पुत्री पन्ना मोहक व्यक्तित्व एवं रंगीन तबीयत वाले लाटसाहब के ए. डी. सी. रोबर्टसन की पुत्री थी ।[२६]

शैलेश मटियानी कृत 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई' की सेठानी नर्मदाबेन में भी यह यौन समस्या पायी जाती है । नर्मदाबेन एक सुरूचि-संपन्न शिक्षित एवं शौकीन तबीयत की युवती थी । किन्तु उसका विवाह एक पौढ़ वय के सेठ के साथ होता है । अतः उसकी स्थिति भी भगवती चरण वर्मा के उपन्यास 'रेखा' की रेखा जैसी होती है । परन्तु रेखा और नर्मदाबेन की स्थितियों में अंतर हैं। जहाँ रेखा की यौन भटकन के कारण उसके पति द्वारा वह तिरस्कृत

और प्रताड़ित होती है; वहाँ सेठ नगीनदास अपनी स्थिति को समझते हुए स्वयं नर्मदाबेन के लिए अन्य पुरुषों की व्यवस्था करते हैं । यह एक सामान्य नियम है कि किसी भी स्त्री में जब एक बार चारित्रिक स्खलन का प्रारंभ हो जाता है तो उसकी यह यात्रा शुरू हो जाती है । और वह नए-नए शिकारों की खोज में रहने लगती है । इस संदर्भ में डॉ. सलीम व्होरा ने सेठानी की इस प्रवृति की ओर संकेतित करते हुए लिखा है - ''सेठ भी अपनी लाचारी से परिचित थे कि विपुल वासनावती सेठानी के पर को थामने का कौवत अब उनमें नहीं रहा है । अतः अपने परिवार तथा कुल की मर्यादा के भीतर रहकर वे सेठानी के लिए उचित व्यवस्था (?) कर देते हैं और वासना की वल्गा को एक बार छूट मिलने के बाद सेठानी के प्यार की घोड़ी हिनहिनाती हुई दौड़ने लगती है । घर में पूजागृह बनाया जाता है । उसके लिए 'खास' किसम के पुजारी को रखा जाता है, स्कूल और अनाथाश्रम खोले जाते हैं, उसके प्रिन्सीपल एवं संचालक सेठानी की तबीयत के रखे जाते हैं । कवि गोष्ठियों के रंगीले शायरों तथा भुदानी झोला लटकाये घुमनेवाले श्रीमान खन्ना जैसे 'मेल प्रोस्टिट्यूटों' से भी सेठानीजी अपना काम चलाती है ।''[२७]

सेठानी की यह वासना संतुष्ट हो जाती परन्तु जो भी व्यक्ति सेठानी को सच्चे दिलसे प्यार करने वाला मिलता है, सेठ नगीनदास उसको किसी-न-किसी प्रकार के अकस्मात में मरवा डालते हैं ।

भगवती चरण वर्मा कृत उपन्यास 'रेखा' की रेखा भी एक विपुलवासनावती स्त्री हो जाती है । युवावस्था में वह ऐसी नहीं थी । किन्तु मुग्धावस्था की भावातिरेकता में वह अपने पिता के उम्र की व्यक्ति से विवाह कर लेती है । फिर भी एक प्रकार से रेखा अपने आपमें संतुष्ट है । असंतुष्टि क्या होती है यह भी शायद वह नहीं जानती । किन्तु दिल्ली में उसकी मुलाकात

प्रोफेसर प्रभाशंकर की पूर्व प्रेमिका के पुत्र से होती है तब उसकी निष्ठा में मानों एक छिद्र-सा पड़ जाता है । उस युवक को देखकर कोई भी कह सकता है कि प्रोफेसर प्रभाशंकर युवावस्था में ऐसे सजीले गठीले घबरू जवान रहे होंगे । और तब अनायास उसका भीतरी मन दोनों की तुलना करता है । रेखा को उस समय पहली बार ऐसा होता है कि उसने प्रोफेसर प्रभाशंकर से विवाह करके क्या गँवाया है । उस दिन के बाद रेखा के मन में एक दरार-सी पड जाती है । उसके बाद रेखा का परिचय उसके भाई के मित्र सोमेश्वर दयाल से होता है । सोमेश्वर रेखा के भाई अरूण के साथ अमरिका में रहता था । वह अरूण के साथ स्वदेश लौटता है तब रेखा से उसका परिचय होता है । उसके पूर्व रेखा की मानसिक नैतिकता एवं पवित्रता में छेद तो पड ही गया था । अतः सोमेश्वर दयाल जब रेखा को अपने बाहुपाश में लेता है तब उसका चेतन-मन, उसका ego ऊपर-ऊपर से तो मना करता है परन्तु उसके अचेतन मन में पड़ी हुई वासना को मानो निःसृति का एक मार्ग मिल जाता है । प्रेम के पागल प्रवाह में वह बहने लगती है । उस बहाव में कुछ क्षणों के लिए वह सब कुछ विस्मृत कर देती है । सोमेश्वर से शारीरिक सम्बन्ध होने पर रेखा को ज्ञात होता है कि बनिस्बत एक वृद्ध के युवा व्यक्ति से प्यार क्या होता है ।[२८]

सोमेश्वर वाले प्रसंग के बाद रेखा यदि प्रोफेसर से तलाक लेकर अपने किसी मन पसंद युवा व्यक्ति से विवाह कर लेती तो उसमें उपर्युक्त बतायी हुई असाधारणता न आती । वह एक Normal जिंदगी जी सकती थी। किन्तु वहां फिर समाज के taboos आड़े आते हैं । सामाजिक प्रतिष्ठा तथा लोकनिंदा का भय वैसा करने नहीं देता । अतः मानसिक भटकन की एक दुष्यात्रा शुरू होती है । सामाजिक बंधनों के कारण उसे अपने नये शिकारों से छिप-छिपकर मिलना पडता है । उसमें उसकी यौन-क्षुधा और भडकती है । वह कोमल भावनाओं वाली, ऊँचे विचारो में रहनेवाली, आदर्शो और सिद्धांतो में

रहनेवाली रेखा मानो मर जाती है और उसका स्थान लेती है एक ऐसी रेखा जो निरंतर यौनक्षुधा से पीड़ित रहती है ।

सूर्यकुमार जोशी द्वारा लिखित उपन्यास 'दिगंबरी' की नायिका भी एक विपुलवासनावती नारी है । उसके जीवन में एक-एक करके सत्ताईस पुरुष आते हैं फिर भी उसकी यौन-क्षुधा संतुष्ट नहीं होती है । आधुनिक मनोविज्ञान का कहना है कि भावुक किस्म की लड़कियाँ यदि यौन संतुष्टि का उपयुक्त मार्ग नहीं पातीं तो उनके विपुलवासनावती होने के अवसर बढ़ जाते हैं । समाज में सामान्य तौर पर ऐसी स्त्रियों पर दुष्चरित्रा, कुल्टा या पुंश्चली कहा जाता है और समाज के लोग उसको वितृष्णा की दृष्टि से देखते हैं । परन्तु यदि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उनका अध्ययन किया जाय तो वे धृणा की नहीं अपितु सहानुभूति की हकदार होती हैं ।

५:०३:०० निष्कर्ष :

अध्याय के समग्रवलोकन से हम निम्नलिखित निष्कर्षों तक सहजतया पहुँच सकते हैं :-

(१) मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में लेखक का दृष्टिकोण मनोवैज्ञानिक समस्याओं के विश्लेषण की ओर रहता है ।

(२) सामाजिक, ऐतिहासिक या राजनीतिक उपन्यासो में भी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ भी होती हैं, किन्तु दृष्टि की भिन्नता के कारण उनका ध्यान उन समस्याओं पर नहीं जाता है ।

(३) सामाजिक समस्यामूलक उपन्यासों के पात्रों का भी मनोवैज्ञानिक अध्ययन हो सकता है ।

(४) बहुत-सी मनोवैज्ञानिक समस्याओं का उत्स वैयक्तिक चेतना में देखा जाता है ।

(५) औद्योगिकरण, नगरीकरण, वैश्विकरण आदि के कारण पारिवारिक संकट गहरा होता जा रहा है और उसके कारण मनोवैज्ञानिक समस्याएँ पैदा हो रही है ।

(६) कई बार सामाजिक वर्जनाओं के कारण करणीय और अकरणीय तथ्यों के कारण मनोवैज्ञानिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं ।

(७) कई बार आर्थिक समस्याएँ मनोवैज्ञानिक समस्याओं को जन्म देती हैं।

(८) मनोवैज्ञानिक समस्याओं में जैविक स्थिति की बहुत बड़ी भूमिका है । जो समस्या एक महिला की हो सकती है, पुरुष की नहीं हो सकती। पुरुष की मनोवैज्ञानिक समस्या स्त्री की मनोवैज्ञानिक समस्या से भिन्न हो सकती है ।

(९) सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण भिन्न भिन्न प्रकार की मनोवैज्ञानिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं । अतः एक प्रकार की सभ्यता और संस्कृति वाले लोगों की मनोवैज्ञानिक समस्याएँ दूसरे प्रकार की सभ्यता और संस्कृति वालों से भिन्न हो सकती हैं ।

(१०) स्त्री और पुरुष की यौन समस्याएँ उनके जीवन को बुरी तरह से ग्रसित और कुंठित करती हैं ।

(११) जब तक ये यौन समस्याएँ निरस्त्र नहीं हो जातीं, स्त्री या पुरुष साधारण (Normal) जीवन नहीं जी पाते ।

* * * *

संदर्भानुक्रम

१. द्रष्टव्य : समीक्षायाण : डॉ. पारूकान्त देसाई : पृ.११४

२. वे दिन : निर्मल वर्मा : पृ.३४

३. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : पृ.५०

४. वे दिन : पृ.२११

५. बिजली के फूल : डॉ. पारूकान्त देसाई : पृ.

६. द्रष्टव्य : त्यागपत्र : जैनेन्द्र : पृ.०८

७. वही : पृ.५५

८. दो लड़कियाँ : रजनी पनिकर : पृ.३१

९. त्यागपत्र : जैनेन्द्र : पृ.७१

१०. द्रष्टव्य : सीढ़ियाँ : शशिप्रभा शास्त्री : पृ.३२७

११. द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : पृ.१७

१२. द्रष्टव्य : वही : पृ.९२

१३. द्रष्टव्य : वही : पृ.१७

१४. द्रष्टव्य : वही : पृ.११९

१५. संदेश : गुजराती दैनिक : दिनांक

१६. सूरजमुखी अंधेरे के : कृष्णासोबती : पृ.१२५

१७. द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : पृ.४०

१८. द्रष्टव्य : सफेद मेमने : मणि मधुकर : पृ.८१

१९. द्रष्टव्य : आधुनिक लेखिकाओं के नगरीय परिवेश के उपन्यास : पृ. १०९

२०. द्रष्टव्य : वही : पृ.११०

२१. हिन्दी उपन्यासमें कामकाजी महिला : डॉ. रोहिणी अग्रवाल : पृ.२१०

२२. An abz of love : Dr. Inge and Dr. Sten hegeler : P. 116

२३. Ibid : P.117

२४. मित्रो मरजानी : कृष्णा सोबती : पृ.२०

२५. द्रष्टव्य : मछली मरी हुई : पृ.११७-१२१

२६. द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : पृ.१५८

२७. शैलेश मटियानी का साहित्य : शोध प्रबन्ध : डो. सलीम ए. व्होरा : पृ.९७

२८. द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : पृ.१६